कुरुक्षेत्र

ग्राम सेवक

सामुदायिक विकास-मन्त्रालय द्वारा प्रकाशित 'ग्राम सेवक' मासिक पत्र का हिन्दी संस्करण ग्रामवासियों के उपयोगार्थ निकाला गया है जिससे कि ग्राम-सुधार की विभिन्न योजनाओं के बारे में ग्रामीण जनता को सामयिक सूचना और समाचार मिलते रहें। भाषा अति सरल और छपाई सुन्दर।

वार्षिक मूल्य १.२५ रुपये : एक प्रति १५ नये पैसे

बाल भारती

नन्हें मुन्नों की सचित्र मासिक पत्रिका जिसमें सरल भाषा में मनोरंजक कहानियाँ, शिक्षाप्रद कविताएँ, उपयोगी लेख और रेखाचित्र प्रस्तुत किए जाते हैं।

वार्षिक मूल्य ४.०० रुपये : एक प्रति ३५ नये पैसे

कुरुक्षेत्र

सचित्र मासिक पत्र जिसमें देश के सामुदायिक विकास कार्यक्रम-सम्बन्धी समाचार तथा लेख प्रकाशित होते हैं।

वार्षिक मूल्य २.५० रुपये : एक प्रति २५ नये पैसे

आकाशवाणी प्रसारिका

(सचित्र त्रैमासिक)

'आकाशवाणी प्रसारिका' (रेडियो संग्रह) आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों से प्रसारित उच्च कोटि की चुनी हुई वार्ताओं, कविताओं तथा कहानियों आदि का त्रैमासिक संग्रह है। गेट-अप सुन्दर।

वार्षिक मूल्य २.०० रुपये : एक प्रति ५० नये पैसे

आजकल

हिन्दी के इस सर्वप्रिय सचित्र मासिक पत्र में भारत भर के प्रसिद्ध साहित्यकारों के विचारपूर्ण लेख, कविताएँ तथा कहानियाँ पढ़िए। साथ ही 'आजकल' में भारतीय कला व संस्कृति के अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर प्रामाणिक लेख प्रकाशित किए जाते हैं।

वार्षिक मूल्य ६.०० रुपये : एक प्रति ५० नये पैसे

पब्लिकेशन्स डिवीज़न,

ओल्ड सेक्रेटेरिएट, दिल्ली-८

कुरुक्षेत्र

सामुदायिक विकास मन्त्रालय का मासिक मुखपत्र

वर्ष २] अप्रैल १९५७ : चैत्र-वैशाख १८७९ [अंक ६

विषय-सूची

आवरण चित्र [कलाकार : ब्रह्मदेव शर्मा]		
आप पैदावार बढ़ाइए !	जवाहरलाल नेहरू	२
भारत में सामुदायिक विकास-कार्यक्रम	डब्ल्यू० एस० वायर्टिस्की	३
सामुदायिक-विकास	शशधर सिंह	८
खेतीबाड़ी के औज़ार	भगवान सिंह	१०
गाँव के भिखमंगे	लीलाधर शर्मा	१२
आज देश ने ली अंगड़ाई [कविता]	गिरिजाशंकर तिवारी 'गिरिजेश'	१४
चित्रावली	...	१५-१८
जागरण [एकांकी]	रमाबल्लभ प्रसाद	१९
भारतीय गाँवों का कायाकल्प	प्रभाशंकर मेहता	२४
बापू से मेरी पहली भेंट	भदन्त आनन्द कौसल्यायन	२६
कुर्सी का शौक	सावित्रीदेवी वर्मा	२७
बिस्तार कार्य में महिलाओं का योग	झरना राय	२९
प्रगति के पथ पर	...	३१

सम्पादक :
केशवगोपाल निगम
[सहकारी सम्पादक, प्रकाशन विभाग]
उप-सम्पादक : *अशोक*

मुख्य कार्यालय
ओल्ड सेक्रेटेरिएट,
दिल्ली—८

वार्षिक चन्दा २.५० रुपये
एक प्रति का मूल्य २५ नये पैसे

विज्ञापन के लिए
बिज़नेस मैनेजर, पब्लिकेशन्स डिवीज़न,
दिल्ली—८ को लिखें ।

आप पैदावार बढ़ाइए !

आज हम ऐसे अवसर पर यहाँ मिल रहे हैं जब पहली पंचवर्षीय योजना खत्म हो चुकी है और दूसरी योजना शुरू हुई है। पहली योजना में सब से ज्यादा ध्यान गया था खाने के सामान की पैदावार बढ़ाने की ओर, खेतों में तरक्की की ओर। जो देश खेती में तरक्की नहीं कर सकता, वह हमेशा परेशान रहता है। हमने खेती की ओर ज्यादा ध्यान दिया और उससे फ़ायदा हुआ। दूसरी योजना में भी हम इस ओर काफी ध्यान दे रहे हैं, हालाँकि कारखानों की तरक्की की ओर ज्यादा ध्यान है। तरक्की तभी हो सकती है जब तराजू के दोनों पलड़े बराबर हों।

आप देश के चुने हुए किसान हैं। इसलिए खास तौर पर आप लोगों को कहना चाहता हूँ कि खेती में दुनिया में सब से कम पैदावार हमारे देश में होती है। हम निकम्मे नहीं हैं, असल बात यह है कि हम जम गए, खेती के तरीकों में आगे नहीं बढ़े। खेतिहर मुल्क होते हुए भी हमारी पैदावार सब देशों से कम है।

भारत में ३० करोड़ आदमी खेती करते हैं। उन सब पर असर कैसे डाला जाए? आप चुने हुए कुछ लोग भले ही ज्यादा तरक्की कर लें, प्रति एकड़ में ३० या ४० मन पैदा कर लें और इनाम ले लें, लेकिन सवाल देश की औसत पैदावार को दुगुना करने का है। यह तभी किया जा सकता है, जब किसानों को आदर्श फार्मों में खेती करने के तरीके बताए जाएँ। मैं नहीं चाहता कि ट्रैक्टरों से खेती करने के तरीके ही चलें। मैं ट्रैक्टरों का विरोध नहीं करता, लेकिन ट्रैक्टरों से बहुत कठिनाइयाँ हो सकती हैं। ऐसे साधनों को ही काम में लेने से उत्पादन बढ़ाया जा सकता है, जिन्हें गरीब से गरीब किसान काम में ला सकें।

दूसरी योजना में राज्य सरकारों ने निर्णय किया कि इस काल में खेती का उत्पादन कितना बढ़ाया जाए। मैं उसे बहुत कम समझता हूँ। (राज्यों ने २८ प्रति शत बढ़ाने का निर्णय किया जब कि भारत सरकार ४० प्रति शत बढ़ाने के पक्ष में थी) मुझे उससे बिलकुल सन्तोष नहीं है। डर-डर के लक्ष्य निर्धारित करना मुझे पसन्द नहीं है। आप ज्यादा पैदावार बढ़ाइए। हम जब राज्य सरकारों को कहते हैं कि पैदावार ज्यादा बढ़ाइए, तो वे कहते हैं ज्यादा पैसा लाओ। आप पैसे से नहीं, मेहनत से पैदावार बढ़ाएंगे। हम चाहते हैं कि देश के सभी गाँव तरक्की करें। इसीलिए हमने सामुदायिक विकास योजना चलाई है जो करीब दो लाख गाँवों में पहुँच चुकी है और १३ करोड़ लोगों पर उसका असर हो रहा है। दूसरी योजना के काल में हम इस योजना को सभी गाँवों में पहुँचा देना चाहते हैं।

आप अपनी जमीनों पर तरक्की करें। वह तो अच्छा ही है लेकिन जरूरी यह है कि पैदावार बढ़ाने के इस काम में औरों को भी साथ लें। सहकारी संघ तरक्की करें, संघ महज कर्ज के लिए न हों, बल्कि कृषि की तरक्की के सभी साधनों के लिए हों।

जब कभी आप देखें कि हम से (सरकार से) गलती हो रही है, तब आप फौरन बताएँ। बड़ी से बड़ी सरकार गलती कर सकती है। अच्छे प्रजातन्त्र की सरकार के माने यह हैं कि अगर वह गलती करे, तो भी उसे सम्हाले; गलती को न सुधारना मूर्खता है।

(तृतीय किसान सम्मेलन में श्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा दिए गए भाषण से)

भारत में सामुदायिक विकास-कार्यक्रम

डब्ल्यू० एस० वायर्टिस्की

प्रसिद्ध अमेरिकी लेखक श्री डब्ल्यू० एस० वायटिंस्की हाल में भारत आए थे। भारत के दौरे में उन्होंने सामुदायिक विकास योजना क्षेत्रों का भी दौरा किया था। अमेरिका लौटने पर उन्होंने न्यूयार्क के 'न्यू लीडर' में इसी विषय पर एक लेख लिखा था। उसका भावानुवाद पाठकों के लाभ के लिए यहाँ दिया जा रहा है।

"मेरा विश्वास है कि देश में सब से महत्वपूर्ण उन्नति विशाल देहाती क्षेत्र में सामुदायिक विकास योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवा के प्रादुर्भाव के रूप में हुई है।" ये शब्द श्री नेहरू ने सामुदायिक विकास योजनाओं सम्बन्धी लेखों के एक संग्रह की भूमिका में लिखे थे। श्री नेहरू ने आगे लिखा—"पहली बार हमने देहातों की समस्या को सही ढंग से हल करने का प्रयत्न किया. गाँववालों को अपनी समस्याएँ स्वयं हल करने के लिए प्रेरित करके। इस चीज़ ने उनमें जीवन का संचार किया, उनकी आँखें खुल गईं, उनके भुजदण्ड पहले से अधिक मज़बूत हो गए और वे काम करने के लिए कटिबद्ध हो गए। मानों उनमें नवजीवन का संचार हो गया।" सम्भव है कि कुछ भारतीय विद्वानों और अर्थशास्त्रियों को नेहरू जी के इस वक्तव्य में कल्पना का अंश अधिक प्रतीत हो, परन्तु मैं नेहरू जी की इस बात से पूर्णतया सहमत हूँ।

भारत में विकास कार्यक्रम का महत्व

भारत के आर्थिक आयोजन में सामुदायिक विकास-योजनाएँ और राष्ट्रीय विस्तार सेवाएँ कोई बहुत बड़ी मदें नहीं हैं। पहली पंचवर्षीय योजना में इस मद के लिये कुल २० करोड़ डालर और दूसरी योजना में ४१ करोड़ डालर रखे गए जो दोनों योजनाओं के कुल व्यय का लगभग ४ प्रति शत ही हैं। भारत के समाचारपत्रों में इन योजनाओं का विशेष उल्लेख नहीं रहता, शायद इसलिए कि उनकी सफलताएँ चमत्कारपूर्ण प्रतीत नहीं होतीं। विश्वविद्यालयों के अर्थशास्त्र के प्रोफैसर भी इनको कोई महत्व नहीं देते। वे इन्हें भारत के महान् औद्योगिक राष्ट्र बनने के प्रयत्न का एक छोटा-सा अंशमात्र ही समझते हैं। हम एक विश्वविद्यालय के औद्योगिक अर्थशास्त्र के नवयुवक प्रोफैसर से मिले। वह केन्स की विचारधारा में विश्वास रखता था। पर उसने अपने राज्य के किसी भी सामुदायिक विकास-योजना खण्ड का दौरा नहीं किया था। जब उसे पता लगा कि हम तपती हुई दोपहरी में जीप में बैठ कर ऊबड़-खाबड़ सड़कों पर होते हुए दूर-दूर के गाँवों का दौरा करने जा रहे हैं, तो वह आश्चर्य-चकित हुए बिना न रह सका। वह दौरे पर हमारे साथ गया और बाद में उसने यह स्वीकार किया कि उसकी आँखें खुल गई हैं। अब वह मान गया कि भारत की आर्थिक उन्नति गाँवों की प्रगति पर ही निर्भर करती है।

जन आन्दोलन

सामुदायिक विकास कार्यक्रम भारत में सरकार द्वारा चलाई जानेवाली अन्य योजनाओं की तरह नहीं है। दरअसल यह तो जनता का कार्यक्रम है जिसमें सरकार भी सहयोग देती है। सरकारी अधिकारियों का काम तो इस योजना का श्रीगणेश करना और गाँववालों को प्रोत्साहन देना है। सामुदायिक विकास-योजनाओं का उद्देश्य है कि गाँवों में रहने वाले ७ करोड़ परिवारों में उत्तम जीवन बिताने की भावना उत्पन्न करना और उनकी सामूहिक शक्ति का सामाजिक और आर्थिक कल्याण के लिए उपयोग करना।

एक पश्चिमी प्रेक्षक के लिए यह कार्यक्रम इसलिए आकर्षक है कि इसमें सामान्य बुद्धि और आध्यत्मिकता, दोनों का समन्वय है। इस योजना का वर्ष २ अक्टूबर से शुरू होकर अगले वर्ष के एक अक्टूबर को समाप्त होता है। २ अक्टूबर का दिन इस लिए चुना गया है कि यह राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी का जन्म दिन है।

इस कार्यक्रम की भावना को समझने के लिए भारत के किसी साधारण गाँववाले का चित्र अपने सामने रखना आवश्यक है। पीढ़ी दर पीढ़ी से उसके पूर्वजों को दो जून खाना भी मुश्किल से

नसीब हुआ और इसीलिए वे वर्त्तमान और व्यक्तिगत लाभ में ही मग्न रहे। भविष्य के बारे में वे कभी सोच ही नहीं सके, आर्थिक प्रगति की उन्होंने कभी आशा ही नहीं की। सिवाय धार्मिक उत्सवों और प्रीति भोजों के उन्होंने कभी मिल कर कोई काम नहीं किया। जनता में एकता कभी रही ही नहीं। गाँवों का शासन प्रायः जमींदारों और परम्परागत धनी परिवारों के हाथ में रहा जो अत्यन्त रूढ़िवादी थे, किसी भी परिवर्तन के विरोधी थे। किसी साधारण व्यक्ति के पास, जो भारत का सच्चा प्रतीक था, आमतौर से निजी सम्पत्ति के नाम पर चीथड़ों के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता था। यह ठीक है कि देश के सभी भागों में स्थिति इतनी दयनीय नहीं थी। कुछेक उपजाऊ इलाकों में गाँव अपेक्षाकृत अधिक समृद्ध थे तथा वहाँ के शासक भी अधिक प्रगतिशील थे। पर अधिकतर गाँवों में गरीबी का अखण्ड साम्राज्य था और जनता का दशा शोचनीय थी।

लोकतन्त्र में जनशक्ति का उपयोग

विदेशी शासन की समाप्ति के साथ भारतवासी अपने मालिक आप बन गए। लोकतन्त्री पद्धति अपनाने के कारण बहुमत का राज स्थापित हुआ। तभी यह बात स्पष्ट हुई कि गाँव ही भारत की रीढ़ हैं और तभी उनकी ओर सबका ध्यान गया। देश का भविष्य गाँवों में रहनेवाले लाखों-करोड़ों व्यक्तियों पर निर्भर करता है। भले ही स्वयं वे इस बात को नहीं समझते, शहरों की राजनीतिक उथल-पुथल में भाग नहीं लेते और न ही सार्वजनिक समस्याओं में उनकी कोई रुचि है। इसी कारण लोकतन्त्री भारत के पुनर्निर्माण में गाँवों में नवजीवन का संचार, किसानों की उन्नति और खेतिहर मज़दूरों की समस्या सबसे अधिक महत्वपूर्ण बन गए हैं।

इस समस्या के अध्ययनकर्ताओं ने भारत की जनशक्ति को आँकने की चेष्टा की है कि उसमें जीवन का कोई चिन्ह मौजूद है या नहीं और उसकी शक्ति कितनी है।

उनकी शक्ति उनकी लाखों-करोड़ों की संख्या में है। प्रत्येक व्यक्ति के पास सोचने के लिए दिमाग़ है और काम करने के लिए दो हाथ। समस्या इतनी ही है कि व्यक्तिगत और सामाजिक लाभ के लिए उनका उपयोग किया जाए। सामुदायिक विकास कार्यक्रम का आधार यही है कि मनुष्य अपने दिमाग़ और हाथ-पैरों से यह काम कर सकता है, उसे यह काम सिखाया जा सकता है और किसी भी अच्छे काम के लिए उसका उपयोग किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में इस कार्यक्रम में मनुष्यों के शारीरिक श्रम करने पर बल दिया गया है। विकास-कार्यों के लिए जनशक्ति का उपयोग होने लगा है।

गंगा में अनेक झरने, नाले आदि मिलते हैं। यदि वे न मिलें तो गंगा का अपने आप में कोई महत्व न रहे। इसी तरह गाँवों में नया जीवन तभी आरम्भ होगा जब सभी गाँववाले व्यक्तिगत लाभ को छोड़ सामूहिक लाभ के लिए सतत प्रयत्नशील हो जाएँगे।

कुछ सामुदायिक खण्डों के आदर्श गाँवों को यात्रियों ने बहुत सराहा। इन खण्डों में जल-विद्युत और खेतों के लिए सिंचाई का उत्तम प्रबन्ध है। पर हम तो भारत के विभिन्न भागों में सामुदायिक विकास-योजनाओं के दिन-प्रतिदिन का काम देखने के इच्छुक थे। सामुदायिक विकास अधिकारियों ने इस काम के लिए हमें सभी आवश्यक सुविधाएँ प्रदान कीं। जहाँ कहीं हम गए, वहीं हमें जाने के लिए एक जीप दी गई और एक योग्य अधिकारी हमारे साथ रहा।

सामुदायिक विकास-योजनाओं की शुरुआत कुछ परीक्षणों से हुई। इन परीक्षणों से यह पता लगाने की चेष्टा की गई कि क्या बिना पूंजी लगाए, खेती के अच्छे तरीके अपना कर, भारतीय किसान अपना जीवनस्तर ऊँचा उठा सकता है? नीलोखेड़ी, इटावा, फ़रीदाबाद और दूसरे स्थानों में किए गए परीक्षण काफ़ी सफल रहे। इटावा में १०२ गाँवों का एक इलाका चुन लिया गया। इसकी आबादी ५०,००० थी। अमेरिका से आए विशेषज्ञों के दल ने किसानों को सिखाया कि सुधरे हुए बीजों का उपयोग किस तरह किया जाए, गेहूँ तथा सेम, मटर आदि स्थानीय फसलों को बदल-बदल कर किस तरह बोया जाए और खेती में पड़ी बेकार वस्तुओं की किस प्रकार खाद बनाई जाए। तीन ही वर्ष में गेहूँ की प्रति एकड़ औसत उपज दुगुनी हो गई। कुछ खेतों में तो उपज बढ़कर तीन से चार गुनी तक भी हो गई। इस तरह यह साबित हो गया कि यदि भारतीय किसान अन्य विकसित देशों के अनुभव से लाभ उठाएँ तथा परिश्रम करें तो वह अपनी दशा में काफ़ी सुधार कर सकते हैं। पर यह तो समस्या का केवल एक ही पहलू है। बड़ी बात तो यह है कि उन्नत खेती के साथ-साथ सामुदायिक भावना का भी प्रसार हो। नीलोखेड़ी के परीक्षण ने यह दिखा दिया कि ऐसा करना सम्भव है और इसीलिए इस आन्दोलन का नाम भी सामुदायिक विकास कार्यक्रम रखा गया।

कार्यक्रम की रूप रेखा

यह कार्यक्रम जिस क्षेत्र में चलाया जाता है, उसे विकास खण्ड कहते हैं। प्रत्येक विकास खण्ड के अन्तर्गत १५० से १७० वर्ग मील तक का इलाका होता है जिसकी आबादी प्रायः ६०,००० से ८०,००० तक होती है। प्रत्येक खण्ड में कुछ विशेष प्रशिक्षित अफ़सर रखे जाते हैं। एक कृषि के लिए होता है और एक पशुपालन के लिए, बाकी अफ़सर भूमि को फिर से खेती योग्य बनाने, सिंचाई और कुएँ खोदने, स्वास्थ्य और सफ़ाई, जन-

कल्याण, शिक्षा और मनोरंजन, सहकारिता तथा दस्तकारी आदि विषयों की देख-रेख करते हैं। स्थानीय परिस्थितियों के लिए उपयुक्त सर्वोत्तम बीजों के विकास के लिए परीक्षण केन्द्र, एक औषधालय, एक पशु-चिकित्सालय और एक नस्ल सुधार केन्द्र भी खोला जाता है। खेती के नए तरीके अपनाने के सम्बन्ध में सब गाँवों में सभाएँ और प्रदर्शन किए जाते हैं। सारे खण्ड तथा हर ५ या १० गाँवों के लिए विकास परिषदें चुनी जाती हैं। इसके बाद हर किसान और हर वर्ग से यह प्रश्न पूछा जाता है कि उनकी सबसे बड़ी तत्काल आवश्यकता क्या है और उसके हल करने के लिए कौन-से कदम उठाए जाने चाहिएँ ?

किसानों में उन्नत बीज मुफ्त बाँटे जाते हैं—इस वायदे पर कि फसल पर उन्हें चुका देंगे। शुरू-शुरू में कई किसानों ने इस अप्रत्याशित प्रस्ताव को सन्देह की दृष्टि से देखा। पर इन उन्नत बीजों की पहली फसल इतनी बढ़िया थी कि गाँव के गाँव ने इसे अपना लिया।

इसके बाद सवाल आता है पानी का, जिसकी समस्या भारत के कई भागों में बड़ी विकट है। स्थानीय दशा को देख कर सिंचाई विशेषज्ञ कुआँ खोदने की सलाह देते हैं। एक कुएँ से प्रायः ३ से ५ एकड़ की सिंचाई हो सकती है। ऐसे कुएँ भारत में हर जगह होते हैं। वर्षा के बाद तो उन्हें निरन्तर ही चलाए रखना पड़ता है, पर इसी परिश्रम के फलस्वरूप सूखी पड़ी धरती हरी-भरी हो जाती है।

गाँवों में नया-जीवन

कई गाँवों में हमने नए खुदे हुए तालाब देखे। उनमें देखने की कोई खास बात नहीं थी। साधारण ढंग से खुदे हुए थे। जब हम वहाँ गए तब उनमें पानी भी नहीं था। वर्षा के मौसम में उनमें पानी भरने की आशा थी। ये तालाब श्रमदान से बनाए गए थे। गाँव के सभी स्त्री-पुरुष, अबाल-वृद्ध, तालाब खोदने में जुट गए। किसी ने यह नहीं सोचा कि मैं इतना काम करूँ और वह इतना काम करे। तालाब पूरा हुआ तो सब को एक सी प्रसन्नता हुई। अब गाँववाले किसी और कार्य में जुटे हुए हैं। खाली बैठे लोग काम करने लगे। नेहरू जी के शब्दों में इस कार्य ने उनके भुजदण्ड मज़बूत बना दिए।

हमने नए कुएँ भी देखे। गाँववालों से बातचीत भी की। उन्हें अपने इस कार्य पर गर्व था। सम्भव है कि विकास-कार्यकर्त्ता अपनी सफलताओं का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन कर रहे हों पर उनकी इस बात में कोई शक नहीं कि इस कार्यक्रम के फलस्वरूप बेकार पड़ी भूमि में खेती होने लगी है, सोए हुए गाँव जाग उठे हैं और उनींदी आँखोंवाले ग्रामवासी मानों अंगड़ाई लेकर उठ खड़े हुए हैं।

हम जीप पर एक गाँव से दूसरे गाँव उन कच्ची सड़कों से होते हुए गए जिन्हें गाँववालों ने खुद बनाया था। मेहनत गाँववालों की थी और सीमेण्ट तथा पुलों के लिए लोहा आदि सरकार ने दिया था। निरीक्षण का प्रबन्ध भी सरकार का था। कुछ गाँव मुख्य सड़क से चार पाँच मील से ज्यादा दूर नहीं थे, पर इस सड़क के अभाव में प्रति वर्ष कई महीनों तक बाहरी दुनिया से अलग-थलग रहते थे।

कुछ गाँवों में हमने चावल की नए तरीके की खेती भी देखी। किसानों ने वहाँ अपने सदियों पुराने तरीकों को छोड़ कर जापानी तरीका अपना लिया था। यद्यपि इस तरीके में परिश्रम अधिक करना पड़ता है, पर उपज भी काफ़ी बढ़ जाती है। कई किसानों ने जापानी तरीके को अपना लिया था, कुछ अभी इस बारे में सोच रहे थे। सड़क के दोनों ओर हमने चावल के परीक्षणात्मक खेत देखे। इन खेतों में प्रदर्शन के तौर पर मज़दूर लगा कर जापानी तरीके से खेती की जा रही थी। पर जापानी तरीके को स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार ढाल लिया गया था। प्रदर्शनों के उत्साही निर्देशक ने हमें बताया कि यह नया तरीका देश में दावानल की तरह फैल रहा है। यह ठीक है कि यह तरीका सब जगह नहीं अपनाया जा सकता। अपने खेतों में इस तरीके से खेती करने में किसानों को अनेक वर्ष लगेंगे पर यह प्रयत्न अत्यन्त वांछनीय हैं क्योंकि इस तरीके से न केवल उपज बढ़ेगी बल्कि उसी खेत पर दूसरी फसल भी उगाई जा सकेगी।

विकास अधिकारी हमें सब कुछ दिखाने के इच्छुक थे—नए कुएँ, नए खेत, खाद के नए गड्ढे, नई सड़क आदि। पशु-चिकित्सक ने अपने सारे औज़ार और टैस्ट ट्यूब सजा कर रखे हुए थे। सफ़ाई विशेषज्ञ ने हमें अत्यन्त उत्साहपूर्वक नए सार्वजनिक शौचालय दिखाए। खण्ड के निर्देशक ने गाँव के घरों की बनावट में हुए अन्तर की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया। इस सारी प्रगति की पश्चिमी देशों की प्रगति से तुलना करने में कोई तुक नहीं। जब वहाँ काम शुरू हुआ तो हालत अत्यन्त दयनीय थी। भारत के सब से गरीब राज्य राजस्थान में हमें नए और पुराने दोनों किस्म के घर दिखाए गए। यदि मुझे पहले न बताया गया होता तो मैं उन्हें घर ही न कहता। गारे-मिट्टी की जीर्ण-शीर्ण दीवारों पर एक टूटा-फूटा छप्पर पड़ा था—न उनमें दरवाज़े थे, न खिड़कियाँ और न ही फर्श। मेज़-कुर्सी खाट, आदि का नाम-निशान तक न था, बर्तनों के नाम पर केवल एक मटका और एक कटोरा पड़ा था। घर के बीचों बीच गोबर जल रहा था। नए घर छतदार थे। धुआँ निकलने के लिए उनमें एक चिमनी भी लगी हुई थी।

एक विकास अधिकारी ने मुझे एक चूल्हे का मॉडल दिखाया। इस चूल्हे का किसानों में प्रचार किया जाएगा। बालचर अपने कैम्पों में जिस चूल्हे का प्रयोग करते हैं, यह उससे बहुत कुछ

मिलता-जुलता था। जब किसानों में यह चूल्हा प्रचलित हो जाएगा, तब किसान उपलों की जगह भूरे कोयले (लिगनाइट) के चूरे के गोले प्रयुक्त करने लगेंगे और गोबर का खाद के रूप में प्रयोग होगा। पर उस अधिकारी ने यह स्वीकार किया कि इस चूल्हे को लोकप्रिय बनाने में तथा पर्याप्त कोयले की व्यवस्था करने में वर्षों लगेंगे।

वस्तुस्थिति धीरे-धीरे बदल रही है। हम हरिजनों के एक गाँव में गए। प्रायः सभी घर पुराने ढर्रे के बने हुए थे। वही जीर्ण-शीर्ण गारे-मिट्टी की दीवारें और पुराने छप्पर; खिड़की का नाम तक नहीं। पर पाँच-छः घर उनसे बिलकुल अलग से लग रहे थे—उनमें एक-एक दरवाज़ा था और दो-दो खिड़कियाँ। एक दालान भी बना हुआ था। जब एक घरवाले ने देखा कि मैं फोटो लेना चाहता हूँ, तो उसने मुझे एक क्षण ठहरने का इशारा किया। फिर वह घर के भीतर गया और अन्दर जा कर सामुदायिक विकास-योजना के दो पोस्टर ले आया। उसकी इच्छा थी कि मैं उसके घर का फोटो पोस्टरों के साथ खींचूँ। खण्ड के मुख्याधिकारी ने, जो हमारे साथ गाइड के रूप में था, हमें समझाया कि अन्य गाँववालों की अपेक्षा हरिजनों ने इस काम में अधिक रुचि ली है। उनके घर खण्ड भर में सबसे अच्छे हैं। पर उस बस्ती में हरिजन घरों की संख्या थोड़ी ही थी। हरिजनों का एक गाँव बनाने का विचार इसलिए छोड़ दिया गया कि यह वर्गहीन समाज के विचार के विपरीत है।

नए स्कूल और उनके विद्यार्थी

जहाँ-तहाँ हमने जनता द्वारा बनाए गए स्कूल भी देखे। सरकार ने भी इनके बनाने में सहयोग दिया। जहाँ कहीं जनता ने स्कूल बनाने का फैसला किया और कुछ भार स्वयं वहन किया, वहाँ बाकी खर्च सरकार ने खुद किया। हर गाँव में अलग-अलग शर्तें तय की गईं। साधारणतया गाँववाले मज़दूरी का भार उठाते हैं और सरकार मकान बनाने का सामान देती है। पर कहीं-कहीं यह काम ठेकेदार से भी कराया जाता है। सरकार और गाँववाले मिल कर भार वहन कर लेते हैं। कुछ जगह स्कूल के भवन बस कहने को ही हैं। तीन दीवारों पर गन्दा-सा छप्पर पड़ा हुआ था, सामने की तरफ़ बिलकुल खुली थी। वहाँ न कोई फर्नीचर था और न कोई पढ़ाई का समान। बच्चे गन्दी जगह में बैठे हुए थे और अध्यापक खड़ा होकर उन्हें पढ़ा रहा था। वह बिलकुल मामूली से कपड़े पहने हुए था और उसके पाँव नंगे थे। कारण यह कि उसे ४०-५० रुपए मासिक वेतन मिलता है; जूते खरीदने के लिए उसके पास पैसे ही नहीं बचते। मैंने जब यह अभिलाषा प्रकट की कि मैं विद्यार्थियों की योग्यता परखना चाहता हूँ, तो उसने कोठी में पड़े फटे-पुराने कागजों के ढेर में से एक पुरानी कापी निकाली। मुझे यह देख कर काफी आश्चर्य हुआ कि जिन विद्यार्थियों से मैंने पढ़ने के लिए कहा, वे सब फर-फर पढ़ गए।

इसी तरह औषधालय, मातृत्व केन्द्र और पंचायत घर भी बनाए गए हैं। कुछ की कीमत तो १,००० डालर या उससे भी अधिक है। इनके लिए प्रायः ५-६ या १०-१२ गाँवों से चन्दा किया जाता है। अमीर किसान अपने हिस्से से अधिक अधिक धन देते हैं। साधारण किसान से १-२ रुपए लिए जाते हैं। जो नकद नहीं दे सकते, वे उतने का श्रमदान करते हैं। कुल लागत का २०-२५ प्रतिशत सरकार देती है।

सामुदायिक विकास प्रशासन इस नियम पर सख्ती से अमल करता है कि जनता और व्यक्ति अपने विकास और भलाई के लिए जो भी योजनाएँ बनाएँ, उनके केवल एक भाग का भार ही प्रशासन वहन करे। तब तक कोई योजना शुरू नहीं की जाती जब तक जनता उस योजना के व्यय पर एक भाग अदा करने को तैयार न हो जाए।

सामुदायिक विकास खण्डों में सहकारिता का जन्म स्वतः ही हो जाता है। भारत के छोटे-छोटे गाँवों में दुकानें नहीं होती हैं। इसलिए सहकारी समितियाँ उपभोक्ताओं की नहीं, बल्कि उत्पादक की हैं। समितियाँ दस्तकारियों, सूत और खेती के औज़ार आदि की होती हैं। प्रायः यह समितियाँ छोटी-छोटी होती हैं। उनके बीस के लगभग सदस्य होते हैं; १०० से अधिक तो किसी-किसी के ही होते हैं। अपनी मदद खुद करनेवालों को सरकार ऋण देने के लिए तैयार रहती है। सामुदायिक विकास योजनाओं के लिए जितना धन निर्धारित किया जाता है, उसका एक बड़ा भाग ऋण देने के लिए रखा जाता है।

समाज शिक्षा

हमारे इस दौरे में दो अधिकारी हमारे साथ रहे—एक थे विकास खण्ड अधिकारी और दूसरे थे समाज शिक्षा निर्देशक विकास अधिकारी लम्बे-चौड़े और जिन्दादिल आदमी थे, निर्देशक महोदय वयोवृद्ध और चुप रहनेवाले। हम एक पंचायत-घर देख कर एक दूसरे गाँव जाते हुए एक रेगिस्तान पार कर रहे थे। तभी वयोवृद्ध सज्जन ने पहली बार चुप्पी तोड़ी—"हम यहाँ समाज-शिक्षा केन्द्रों का विकास कर रहे हैं।"

पर समाज-शिक्षा से क्या तात्पर्य है? एक भीड़ कब अनुशासित समुदाय बन जाती है? नेता कौन बनता है? एक ही मनुष्य किसी परिस्थिति में क्यों ऊँचा उठ जाता है और किसी परिस्थिति में क्यों असफल रहता है? इस बात का पता किस तरह लगाया जाए कि अमुक आदमी को स्थानीय नेता के रूप में प्रशिक्षित किया जा सकता है या नहीं?

रेगिस्तान से गुज़रते हुए जीप में बैठ कर हम समाज विज्ञान के बारे में चर्चा करते रहे। निर्देशक महोदय मिशिगन विश्व-विद्यालय के स्नातक थे। बाद में वह भारत के एक प्रसिद्ध विश्वविद्यालय में समाज विज्ञान के प्रोफेसर बन गए। पर उनको विश्वास था कि देश का भविष्य जन साधारण की उन्नति पर ही निर्भर करता है। इसलिए विश्वविद्यालय छोड़ कर वे समाज शिक्षा

कै इस कार्य में जुट गए। खाद के गड्ढे तथा कुएँ खोदने और बीज-वितरण की प्रगति से वह सन्तुष्ट नहीं थे। उनके मतानुसार इस कार्यक्रम की सफलता की जाँच तो तब होगी जब सामुदायिक विकास योजना की जगह राष्ट्रीय विस्तार सेवा ले लेगी। तब क्या जनता अपने में से ही चुने हुए नेताओं के दिखाए रास्ते पर चलेगी और नए-नए तरीकों को अपनाएगी ? प्रोफेसर महोदय को इस बारे में पूर्ण विश्वास न था। मैंने कहा कि तुरन्त ३-४ साल में तो नहीं, पर १५-२० साल बाद जब आजकल स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चे जीवन-क्षेत्र में प्रवेश करेंगे, तब अवश्य सफलता की आशा की जा सकती है। प्रोफेसर महोदय ने कहा कि सम्भव है कि मेरा विचार ठीक हो—हमारे पहले साथी अत्यन्त मनोयोगपूर्वक सारी बातें समझने की चेष्टा करते रहे।

दो कमियाँ

मैंने इस कार्यक्रम में दो ही कमियाँ महसूस की। पहली तो यह कि आवश्यकता से अधिक द्रुत गति से काम पूरा करने की अपेक्षा की जाती है। एक सामुदायिक खण्ड में सामुदायिक विकास प्रशासन को ३-४ साल में ही अपना काम समाप्त करना पड़ता है। मुझे इस पर विश्वास नहीं होता कि तीन-चार साल की छोटी अवधि में जनता की विचारधारा और आदतें बदली जा सकती हैं। दूसरे, इस कार्यक्रम में साधारण शिक्षा को पर्याप्त महत्व नहीं दिया गया जो कि भावी सन्ततियों को नए राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक वातावरण में रहने योग्य बनाती है। यह कमी प्रशासन के प्रगति-विवरण से स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। पहले ढाई साल में ३,५३५ नए देहाती स्कूल खोले गए और १,७२७ स्कूलों को बुनियादी स्कूलों में बदला गया। दूसरे शब्दों में ७०,००० गाँवों में ३,५०० नए स्कूल या २० गाँवों में एक नया स्कूल खोला गया। हिसाब से एक करोड़ स्कूल जाने योग्य बालकों में से केवल एक लाख की शिक्षा की व्यवस्था हुई है।

धन का न होना, अध्यापकों की कमी, अनपढ़ माता-पिता का बच्चों को स्कूल भेजने के प्रति विरोधभाव और बच्चों के खेतों और घरों में काम करने के बावजूद भी ये आँकड़े निराशाजनक हैं। मेरी सम्मति यह है कि अन्य योजनाओं को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि इस आन्दोलन के संचालकों के दिल में शिक्षा का विशेष महत्व नहीं है। वे साक्षरता और स्कूलों के लाभ समझते हैं और वे ६-१४ वर्ष की आयु के बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा की आवश्यकता को स्वीकार करते हैं। पर वे शिक्षा की अपेक्षा दूसरी चीज़ों, जैसे उन्नत बीजों, पशु-सुधार, सिंचाई और औद्योगीकरण को अधिक आवश्यक समझते हैं। कार्यक्रम की अवधि को देखते हुए यह बात स्पष्ट हो जाती है। उन्हें तीन या चार साल में ही अपनी सफलता दिखानी पड़ती है, जबकि शिक्षा के परिणाम दृष्टिगोचर होने में इससे कहीं अधिक समय लगता है।

शिक्षा के प्रति सामुदायिक विकास योजना अधिकारियों में कम रुचि होने का एक अन्य कारण भी है और वह है वर्तमान प्राइमरी स्कूलों के कार्यक्रम के बारे में उनका सन्देहात्मक दृष्टिकोण। पढ़ाई-लिखाई और गणित के अतिरिक्त इन स्कूलों में और कुछ नहीं सिखाया जाता। ऐसे स्कूलों को बुनियादी स्कूलों में बदलने की प्रवृत्ति का यही कारण है। पर हमने जो बुनियादी स्कूल देखे, उनमें और साधारण स्कूलों में कोई विशेष अन्तर नहीं था। उपकरणों की वहाँ भी कमी थी, उतने ही वे गन्दे थे और अध्यापकों का वेतन उसी तरह कम था। अन्तर केवल इतना था कि उनमें पढ़ाई के साथ-साथ दस्तकारी भी सिखाई जाती थी।

ऊपर मैंने सामुदायिक विकास कार्यक्रम को जो कमी बताई है, दर असल तो सारी पंचवर्षीय योजना में ही यह कमी है। भारत के राजनीतिक नेताओं और अन्य विद्वानों का भी यही दृष्टिकोण प्रतीत होता है।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम के सर्वाधिक महत्वपूर्ण होने का कारण यह नहीं है कि देहाती जनता पर इसने तुरन्त कोई असर डाला है, बल्कि यह है कि इसने उसे गरीबी की समस्या को स्वयं हल करने की प्रेरणा दी है इस कार्यक्रम का जो छोटा-सा क्षेत्र है, उसमें इसे आशातीत सफलता प्राप्त हुई है। शिक्षा के क्षेत्र में इसे अवश्य ही सफलता नहीं मिली। पर यह समस्या कुछेक गाँवों में बैठ कर हल की भी नहीं जा सकती। यह तो तभी हल हो सकेगी जब सारा देश इस कार्यक्रम के इस मूल उद्देश्य की स्वीकार कर लेगा—**जनता की विचारधारा, दृष्टिकोण और मत बदल कर ही आर्थिक प्रगति का आयोजन करना है।**

सामुदायिक-विकास

शशधरसिंह

: १ :

सिद्धान्त और व्यवस्था

"·····विभिन्न सभ्यताओं के जीवन तत्व अलग-अलग होते हैं। जिस संस्था में जन-कल्याण का दायित्व पंजीभूत होता है, वहीं राष्ट्र का जीवन स्पन्दित होता है और यदि उस पर कुठाराघात हो, तो समूचा राष्ट्र प्राणविहीन हो जाएगा। इंगलैण्ड में सरकार का तख्ता पलट देने का अर्थ होगा राष्ट्र की मृत्यु। परन्तु हमारे देश में ऐसा तभी हो सकता है जब हमारा समाज अपंग हो जाए। शायद यही कारण है कि सत्ताधारी एक के बाद एक बदलते रहे और हमने विशेष चिन्ता न की, परन्तु समाज की शक्ति और स्वाधीनता अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए प्राणपण से प्रयत्न करते रहे।"—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

भारतीय सभ्यता की गिनती संसार की प्राचीनतम सभ्यताओं में होती है। दूसरी सभ्यताएँ पनपीं और मिट भी गईं, लेकिन भारतीय सभ्यता हज़ारों वर्षों तक फलती-फूलती और विकसित होती रही। यह इतिहास की एक अपूर्व घटना है। इसका राज़ क्या है? रवि बाबू के उपर्युक्त उद्धरण से इस रहस्य की कुंजी मिल जाती है। भारत की ग्राम-व्यवस्था, जिस पर जन कल्याण का सारा उत्तरदायित्व था, समूची स्थिति स्पष्ट कर देती है। भारत की संस्कृति और समृद्धि के आधार गाँव जब तक स्वशासित रहे, गाँववालों को अपना शासन चलाने का अधिकार रहा और भारतीय सभ्यता की जीवन-शक्ति में किसी को सन्देह नहीं हुआ।

यह तो आपको ज्ञात ही है कि भारत की परम्परागत सामाजिक व्यवस्था पर विदेशी विजेताओं का या राजवंशों के बदलते रहने का नहीं के बराबर प्रभाव पड़ा। जिस किसी के हाथ में शासन की बागडोर रही, उसने तत्कालीन व्यवस्था को स्वीकार किया और वह उसी रूप में आगे चलती रही। भारत में यूरोपीय शासकों के पैर जमते ही स्थिति एकदम बदल गई। धीरे-धीरे भारत पर अंग्रेजों का प्रभुत्व स्थापित हो गया। शासन और कानून-व्यवस्था के बारे में उनके सिद्धान्त और विचार कुछ दूसरे ही थे। वे इस देश को अपना बनाने नहीं आए थे। उन्होंने भारत की सामाजिक और आर्थिक रचना को उसी हद तक स्वीकार किया जहाँ तक उनका स्वार्थ सधता था। इस बीच इंगलैण्ड में उत्पादन के तौर-तरीकों में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। मशीन का बना माल भारत में निर्बाध गति से आने लगा। यहाँ से देश की दस्तकारियों का विनाश आरम्भ हुआ और 'गाँवों की आत्मनिर्भरता' और शासन का विघटन शुरू हुआ। भारतीय कारीगरों की स्थिति को ऐसा धक्का लगा जिसकी कसर कभी पूरी नहीं हो सकी। अधिकांश कारीगरों को रोज़ी के लिए मजबूरन खेती-बाड़ी में लगना पड़ा। जिनके पास ज़मीन न थी, उन्हें पेट भरने के लिए मज़दूरी का सहारा लेना पड़ा। जो लोग कताई-बुनाई और अन्य धन्धों में लगे रहे उनकी आर्थिक स्थिति बहुत गिर गई।

इससे स्पष्ट हो जाता है कि भारत में इतने अधिक लोगों का कृषि पर निर्भर रहने, ग्रामोद्योगों के ह्रास और भूमिहीन मज़दूरों की संख्या में वृद्धि का कारण क्या है।

देश के नेताओं ने, खास कर गांधी जी ने इस समस्या पर अपने-अपने ढंग से विचार किया और उसका हल खोजने की कोशिश की। यह समस्या इतनी व्यापक थी और उसकी जड़ें इतनी गहरी थीं कि किसी एक व्यक्ति के प्रयत्न से गाँवों की दशा सुधर नहीं सकती थी। ज़रूरत इस बात की थी कि सरकार गांवों की गरीबी मिटाने के लिए अपनी पूरी ताकत लगा दे। विदेशी शासकों से ऐसी आशा करना दुराशा मात्र था। इसलिए स्वाधीनता मिलने तक कुछ नहीं हो सका।

१५ अगस्त, १९४७ को भारत स्वाधीन हुआ; देश की गरीबी को नए पहलू से देखा जाने लगा और उसे शीघ्र दूर करने की आवश्यकता की ओर ध्यान गया। लेकिन देश के विभाजन से

भारत की अर्थ व्यवस्था का सन्तुलन बिगड़ गया था। भारत खाद्य के मामले में आत्मनिर्भर न रहा। करोड़ों लोगों के लिए अनाज की व्यवस्था का प्रश्न उठा। विदेशों से अनाज मँगाना आवश्यक हो गया। एक और दिक्कत पेश आई। वह थी लोगों का बेघर हो कर पाकिस्तान से भारत आना। उधर उपभोग्य वस्तुओं का अभाव मिटाने की भी समस्या सामने आई जो औद्योगीकरण के ही जरिए दूर की जा सकती थी।

इन सब का इलाज योजना है। पहली पंचवर्षीय योजना बनाई गई और १९५० में उसे लागू किया गया। इसका उद्देश्य था कि देश का सर्वतोमुखी विकास करना; परन्तु मुख्यतः खाद्य के मामले में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने पर विशेष बल दिया गया। खेतों में उपज बढ़ाने के लिए गाँववालों को प्रोत्साहन दिया गया और उत्पादन वृद्धि के साधन के रूप में सामुदायिक विकास कार्यक्रम आरम्भ किया गया।

सामुदायिक विकास किसी संकीर्ण विचार धारा पर आधारित नहीं है। खेती को उपज बढ़ा कर आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए वैज्ञानिक साधन और जनशक्ति जुटाने के लिए ही खास तौर से सामुदायिक विकास आयोजित किया गया हो, सो बात नहीं है। इसका उद्देश्य है गाँवों का सर्वतोमुखी विकास ताकि अधिकांश देशवासी स्वस्थ और सन्तुष्ट जीवन बिता सकें। इसे हम यों कह सकते हैं कि एक नई विचारधारा पर चल कर भारत की परम्परागत सामाजिक व्यवस्था को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया जा रहा है। औद्योगीकरण अपने आप में बढ़ी हुई जनसंख्या का हल नहीं है और न अनाज के मामले में हमें आत्मनिर्भर बनाने का नुस्खा है। भारत के बहुमुखी आर्थिक और सांस्कृतिक विकास का केवल एक यही रास्ता है कि देश के साढ़े पाँच लाख गाँवों में पुनर्जागरण हो और वहाँ के सब लोग रोज़गार-धन्धे से लग जाएँ।

ज़ाहिर है कि अतीत को फिर से लाना न तो सम्भव है और व वांछनीय ही। भारतीय सभ्यता के विकास में स्वशासित गाँवों को जो स्थान प्राप्त था, वह उन्हें अब नहीं दिया जा सकता। परन्तु नए युग के सन्दर्भ में उनका स्वरूप ऐसा होना चाहिए जो समूचे देश के लिए प्रकाश और जीवन-शक्ति के स्रोत बन सकें। इसके लिए यह ज़रूरी है कि स्वयं गाँववाले गाँवों को उन्नत बनाएँ, उन तक ज्ञान का प्रकाश पहुँचाया जाए, उनको और स्वस्थ बनाया जाए और कृषि, छोटे और कुटीर उद्योगों को आधुनिक तौर-तरीकों से विकासित किया जाए। सामुदायिक विकास कोई नई चीज़ नहीं है। मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि भौतिक सुख-साधनों को जुटाने के लिए प्राचीन विचार को मूर्त रूप दिया गया। परन्तु वास्तविक उद्देश्य उन गुणों को लाना है जो लोगों में साहस, सहकार, परिश्रम, नए विचारों को ग्रहण करने की रुचि और नए अवसरों से लाभ उठाने का माद्दा पैदा करे।

यद्यपि सामुदायिक विकास कार्यक्रम सरकार के तत्वाधान में शुरू हुआ है, मगर इसकी सफलता जनता के पूर्ण सहयोग पर ही निर्भर है। दूसरे शब्दों में इसकी सफलता के लिए इसका जनप्रिय होना और जन आन्दोलन का रूप ग्रहण करना अनिवार्य है।

प्राचीन ग्राम-व्यवस्था की सफलता का आधार था ग्रामों में स्वशासन। उथल-पुथल के बावजूद उसके सदियों तक बने रहने का सारा राज़ यह था कि ग्रामवासी गाँवों की भलाई-बुराई में पूरी दिलचस्पी लेते थे। स्वाधीनता मिलने के बाद इस वैज्ञानिक युग में गाँवों के संगठन का स्वरूप बहुत कुछ दूसरा होगा, यद्यपि स्वशासित गाँवों का बुनियादी उद्देश्य वही रहेगा। ध्यान देने योग्य दूसरी बात यह है कि देश के पुनर्निर्माण का कार्य एक विराट् कार्य है। इस बात से तो सभी सहमत हैं कि यह कार्य अकेले सरकार के बूते का नहीं है। इसलिए नवभारत के निर्माण में जनता के सहयोग का स्थान सर्वोपरि है और उसके बिना काम नहीं चल सकता। इस प्रकार सामुदायिक विकास जनता के प्रयत्नों से देश का विकास करने के कार्यक्रम का एक अभिन्न अंग है।

सही मानों में लोकतन्त्र तभी आ सकता है जब जनता न केवल अपने अधिकारों के प्रति सजग हो, वरन समाज और राज्य के प्रति उसका कर्त्तव्य क्या है, इसे भी भली भाँति समझती हो। अतएव यदि भारतीय समाज में लोकतन्त्र की जड़ें जमानी हैं, तो गाँवों से ले कर ऊपर तक सब स्तरों पर स्वशासन की व्यवस्था होनी चाहिए। लोकतन्त्रीय संस्थाओं की सफलता के लिए, बाह्य संचालित संस्थाओं द्वारा भौतिक उद्देश्यों की पूर्ति उतनी महत्वपूर्ण नहीं है जितना उपयुक्त मनोवैज्ञानिक वातावरण का होना। लोकतन्त्रीय संस्थाओं की जड़ें स्थायी रूप से तभी जम सकती हैं जब कि लोगों को अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए स्वयं कार्य करने और आगे बढ़ने का अवसर मिलता रहे। भारत में लोकहितकारी राज्य की धारणा के मूल में यही कल्याणकारी भावना काम कर रही है।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम 'सरकार के सहयोग से जनता का कार्यक्रम' के रूप में प्रारम्भ हुआ। शुरू-शुरू में यह ज़रूरी था कि पहले सरकार इस मैदान में आती परन्तु ज्यों-ज्यों आन्दोलन सशक्त होता जाएगा, जनता इसे अपनाती जाएगी और अन्त में सरकार के जिम्मे मुख्यतः समन्वय का और मार्गदर्शक का ही काम रह जाएगा।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम, जो अब काफी लोकप्रिय हो

[शेष पृष्ठ २८ पर]

खेती-बाड़ी के औज़ार

भगवान सिंह

सैकड़ों पीढ़ियों से हमारे पुरखे उसी भूमि पर खेती-बाड़ी करते आए, परन्तु गंगा और यमुना की धारा की तरह वही रास्ता और वही रवानी रही। हमारी खेती-बाड़ी के औज़ार भी करीब उसी ढंग से चलते रहे। समय और मौसम ने उन पर कोई परिवर्तनकारी प्रभाव नहीं छोड़ा। कुछ लोगों की निगाह में वे आज भी हमारी प्राचीन संस्कृति और सभ्यता के प्रतीक बने हुए हैं। हुकूमतें बदल गईं। युगों ने पलटा खाया। सामाजिक व्यवस्था का मूल्यांकन तब्दीली की राह से गुज़र गया, मगर हमारे खेती-बाड़ी के औज़ार वेद वाक्य की तरह प्रायः अडिग और अमर ही रहे। उस दिन बौद्ध-धर्म और सभ्यता की गौरव गरिमा के प्रमुख स्थान साँची में संग्रहालय को देखने का अवसर मिला। उसमें भारत के उस स्वर्णकालीन युग के खेती-बाड़ी के औज़ार रखे हुए हैं, जो आज के औज़ारों से अधिक भिन्न नहीं। वस्तुतः आकार, प्रकार तथा निर्माण में एक से ही हैं।

इसका तात्पर्य यह नहीं कि हमारे खेती-बाड़ी के औज़ार समय के अनुसार अनुपयुक्त हों। वह सिद्धान्त और निर्माण के दृष्टिकोण से अब भी उतने ही कार्यशील और उपयुक्त हैं, जितने सौ साल पहले थे। परन्तु द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् जिन समस्याओं ने विकट रूप धारण किया, उसमें अन्न की समस्या एक प्रमुख समस्या थी। अधिक अन्न उत्पादन के आन्दोलन ने ज्यों-ज्यों ज़ोर पकड़ा, त्यों-त्यों मशीनवाद भारत की खेती-बाड़ी के साधनों में घर करता गया। बैल का काम, हल का काम, बोने काम, मशीन से लेने की चर्चा ही नहीं हुई, बल्कि विदेशी मशीन के निर्माताओं ने हमारे देश में इन मशीनों के जहाज़ के जहाज़ खाली करने शुरू कर दिए। नाना प्रकार की मशीनें आज प्रचलित हो गई हैं। सरकारी दृष्टिकोण भी मशीन से खेती को अन्नोत्पादन का सुगम और सफल उपाय-सा समझने लगा है। इन मशीनों के निर्माताओं तथा इनके व्यवसायियों के व्यवसाय कुशल तथा वाक्य-चातुर्य में माहिर एजेण्ट भोले तथा खाते-पीते किसानों को हर प्रकार समझा-बुझा कर मशीनें बेचने लगे। हमारे सामाजिक जीवन में आधुनिकता पूरी तरह प्रवेश कर चुकी है। जिस प्रकार हमारे साहित्य में प्रगतिवाद तथा प्रतीकवाद आगे बढ़ने के रास्ते समझे जाने लगे, उसी प्रकार खेती-बाड़ी के औज़ारों में मशीनों का प्रयोग भी आधुनिक किसान बनने तथा उपज बढ़ाने का तरीका समझा जाने लगा। यह सच है कि बहुत-सी खेती-बाड़ी मशीनें, समय और श्रम बचाने में कारगर साबित हुईं; परन्तु आज की हमारी खेती-बाड़ी प्रधानतः

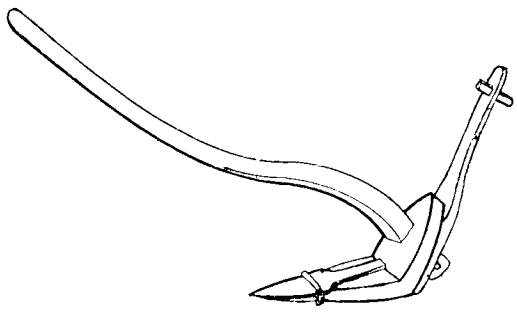

सुलभ नागर

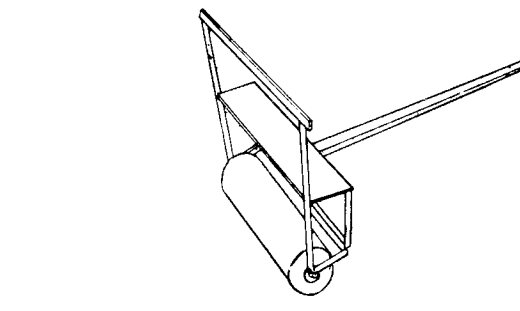

ज्वार की मडाई करने का पत्थर का रोलर

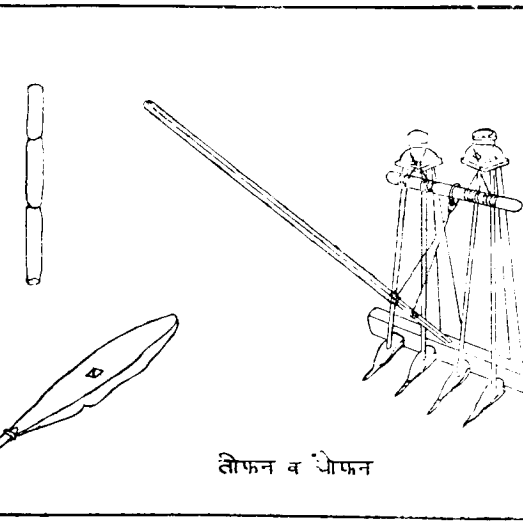

तोफन व चोफन

बैल, हल और हाली के संगम का ही फल है।

एक प्रसिद्ध विद्वान् ने लिखा है : "बैल के बदले बिजली की मोटर और तेलवाले इंजन से खेती करने में एक हानि तो अवश्य है कि मशीनों से गोबर और मूत पैदा नहीं होता। इसलिए यह मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने में कोई सहायता नहीं कर सकते।"

अतः खेती-बाड़ी के औज़ारों को मोटे तौर पर तीन भागों में बाँटा जा सकता है। पहले, मनुष्य-शक्ति से संचालित, दूसरे पशु-शक्ति द्वारा संचालित तथा तीसरे, यन्त्रों द्वारा संचालित। इस लेख में मैं केवल बैलों द्वारा काम आने वाले औज़ारों के बारे में ही चर्चा करूँगा।

मनुष्य तथा पशु-शक्ति द्वारा संचालित खेती के औज़ारों में कुछ छोटे-छोटे सुधार किए गए हैं और हमारे वर्षों के अनुभव पर आश्रित औज़ारों में छोटे और साधारण, कुछ अन्य सुधार भी किए जा सकते हैं। मगनवाड़ी, वर्धा में इसी प्रकार के सुधरे हुए औज़ारों की एक प्रदर्शनी अखिल भारतवर्षीय सर्व सेवा संघ के तत्वावधान में आयोजित की गई थी। वहाँ यों तो बहुत-से औज़ार प्रदर्शनी में रखे गए थे, पर समयाभाव के कारण थोड़े से ही मुख्य औज़ारों का ज़िक्र यहाँ किया जा रहा है।

१. ज्वार इत्यादि की मड़ाई करने के लिए हमने अपने गाँव में देखा है कि दाँय के पैर में आठ बैल और दो-दो आदमी उसको बिखरने से बचाने के लिए लगे रहते हैं। इस प्रदर्शनी में ज्वार की मड़ाई करने के लिए एक पत्थर का रोलर रखा गया था, जिसकी गोलाई ६० इंच, बड़ी गोलाई ७० इंच और लम्बाई ३ फुट थी। इसके द्वारा ऊपर हल्के लोहे की ८ फुट लम्बी एक बैंच लगाई गई थी, जो बैठने के काम आती थी। यह कोई नया आविष्कार नहीं। कर्नाटक में इसका आमतौर से उपयोग होता है। पंजाब में ज्वार, बाजरी की मड़ाई के लिए भी कहीं-कहीं काम में लाया जाता है। यह रोलर फसलों की मड़ाई, दूसरे खेतों के ढेलों को फोड़ कर बारीक करने तथा खेत को बोने लायक बना देने का काम करता है। दो बैलों की सहायता से इसे एक-दो बार घुमाने पर ढेले बारीक हो जाते हैं। इसी प्रकार यदि बोने के पहले खेत में नमी (आल) कुछ कम हो तो यह रोलर घुमाने से गीलापन ऊपर आ जाता है और बोया हुआ बीज बड़ी सुगमता से उपजता है। इसे एक बैल जोड़ी से एक आदमी द्वारा चलाया जाता है। जिसे १०० मन की पैरी पर चलाने के लिए कम से कम आठ जोड़ी बैलों की ज़रूरत होती है, उसी पर दो बैलों द्वारा उस रोलर को घुमा कर उससे आधे समय में काम पूरा किया जा सकता है। आठ घण्टों में १०० मन ज्वार की मड़ाई की जा सकती है अथवा आठ जोड़ी बैलों का काम एक जोड़ी से ही हो जाता है। इसकी कीमत लगभग ५० रुपए है और यह पचासों साल काम दे सकता है। एक हज़ार की आबादी वाले गाँव में तीन-चार रोलरों से फ़सलों की मड़ाई का काम आसानी से हो सकता है।

२. मड़ाई की हुई फ़सलों से भूसे को उड़ाने का काम भी बड़े महत्त्व का है। इसमें ग़लती होने से बहुत-सा अनाज भूसे में मिला रह जाता है क्योंकि बरसाने का काम हवा की रफ्तार और उसके रुख़ पर निर्भर है। हवा कभी समान गति से चलती नहीं है; कभी तेज़ झोंकों से चलती है और बारीक अनाज के दानों को भूसे के साथ उड़ा ले जाती है और कभी इतनी मन्द गति से चलती है कि किसान को घण्टों टोकरी लिए खलिहान में खड़ा रहना पड़ता है। कभी-कभी मड़ाई की हुई फ़सलें हवा न होने से कई-कई दिन खलिहानों में ही पड़ी रहतीं हैं जिससे चोरी तथा वर्षा का भय किसान को लगा रहता है। हवा की यह कमी किसानों को बहुत ही खलती है परन्तु लाचारी से सब सहना पड़ता है। इस काम के लिए एक ऐसा पंखा बनाया गया है जिससे मड़ाई की हुई फ़सलें आसानी से उड़ाई जा सकें। इन मशीनों के अन्दर पंखे लगे होते हैं। बाहर से जब पंखे घुमाए जाते हैं, तब हवा पैदा होती है और जब इसमें मड़ाई की हुई फ़सलों का दाना, भूसा डाला जाता है तो यह पंखों की हवा के द्वारा साफ़ हो कर अलग-अलग गिरता जाता है। इन मशीनों के द्वारा ५-६ आदमियों की सहायता से दिन भर में २५० मन अनाज की सफ़ाई सुगमता से की जाती है। इसकी कीमत भी करीब-करीब १५० रुपए है। यदि सहकारी पद्धति से काम चले, तो ३-४ पंखों से गाँव-भर का काम हो सकता है।

३. बीज बोने का एक उत्तम साधन तीफन या चौफन नाम का एक औज़ार है जिससे २ से ५ तक लाइनें एक साथ बोई जाती हैं। एक बैल जोड़ी इसके द्वारा ४-६ घण्टों में आसानी से ३-४ एकड़ ज़मीन की बोआई कर सकती है। तीफन या चौफन से बोआई की हुई फ़सलों की निकाई, गुड़ाई, डोरा, दुएडा आदि औज़ार चला कर कम खर्च और कम समय में आसानी से की जा सकती है। हाथ से फेंक कर बीज बोने की प्रथा से यह तरीका कहीं अधिक वैज्ञानिक और लाभदायक व आसान है। हाल में इसे सर्व सेवा संघ काम में ला रहा है।

४. सुलभ नागर, जो बालाप्रसाद जी, ज़िला नादेड़, हैदराबाद निवासी ने सुधार कर बनाया, काफ़ी उपयोगी औज़ार है। दो बैलों से चलने वाला यह नागर काफ़ी गहराई पर ज़मीन पर चलता है तथा मिट्टी को उपर की ओर फेंकता जाता है और हवा की तरह अपने साथ मिट्टी को घसीटता हुआ नहीं चलता। एक विशेषता यह भी है कि यह अपनी जोत में नीचे और ऊपर की ज़मीन की सतह को अलग-अलग नहीं करता बल्कि दोनों सतहों के बीच फिर कर काम करता है। इसकी बनावट काफ़ी

[शेष पृष्ठ १३ पर]

गाँव के भिखमंगे

लीलाधर शर्मा

ज़रा उधर देखिए। ध्यान से देखिए। कोई चला आ रहा है। देखा आपने, तीन आदमी हैं। सब से आगे एक छोटा-सा लड़का है। उम्र में तो लड़का, लेकिन बाने से पूरा बुज़ुर्ग। सिर पर जटा-जूट हैं और एक हाथ में कमण्डल और दूसरे में त्रिशूल। तन पर कोई कपड़ा नहीं है। मोटी-सी रस्सी के सहारे एक लंगोट भर बाँधे हैं। माथे पर त्रिपुण्ड देखिए, गले में रुद्राक्ष की माला। मानो कहीं कन्दरा से कोई यती अभी उठ कर चला आ रहा हो। उसके पीछे एक और बाबा जी हैं। उनकी वेशभूषा भी बिलकुल वैसी ही है जैसी कि लड़के की। उनके पीछे एक और आदमी है, हट्टा-कट्टा, मोटा-ताज़ा। उसने भी, देखिए, गेरुआ बाना पहन रखा है। वे आ रहे हैं; कहाँ से, यह पता नहीं। जाएँगे कहाँ, इसका भी पता नहीं। आपके गाँव में टिकेंगे, दो दिन, चार दिन, जितनी उनकी मरज़ी हो, जितनी आप श्रद्धा दिखाएँ। आपके बच्चों को भले ही दूध न जुटता हो, आप बिना छौंकी तरकारी खाते हों, लेकिन उनको दोनों वक्त दूध-दही और मालपुआ ही खाने को मिलना चाहिए। अगर सीधे ढंग से आपने दे दिया तो वाह वाह, वरना ऐसी लाल-पीली आँख दिखाएँगे मानो परशुराम के अवतार वही हैं और शंकर की तरह तीसरा नेत्र खोल कर सब कुछ भस्म कर देंगे। ये पहली बार आपके गाँव में आ रहे हों, ऐसा भी नहीं है। यह दर्रा चलता ही रहता है। साल में बीस-पच्चीस मौक़े तो ऐसे आते ही होंगे जब इस तरह के दो-तीन साथ-साथ चलनेवाले बाबा लोगों की सेवा आप करते हों

आपकी मेहनत की कमाई के हिस्सेदार केवल इसी बिरादरी के लोग नहीं। और भी बहुत से उसमें से हिस्सा बँटाते हैं। अगर आपकी खेती-बाड़ी का काम कुछ हल्का है और कुछ देर साथ बैठ कर बातचीत करने का मौक़ा मिला, तो देखिएगा कहीं न कहीं से कोई ऐसा व्यक्ति आ जाएगा जो आप के भूत और भविष्य की बातें बताने का दावा करे। आरम्भ में ऐसे लोग कुछ बातें सही भी बताते हैं। मानता हूँ कि आपके घर की, गाँव की कुछ बीती हुई बातें वे सही बताएँगे जिससे आपका उनके ऊपर विश्वास हो जाएगा। लेकिन यकीन मानिए यह उनकी बुद्धिमत्ता का परिणाम नहीं है। वह उस मेहनत का फल है जो उन्होंने हाथ देखनेवाला बनने से पहले स्वयं या अपने किसी साथी को आपके घर या गाँव भेज कर आपके यहाँ की पिछली बात को पता लगा लेने में की। चार पुरानी बातें जहाँ सही मालूम हुईं, आपका विश्वास जमा। और फिर तो अपने भविष्य की बातें जानने के लिए आप अपनी टेंट खोल देंगे। ऐसा भी होता है वे भविष्य ही नहीं बताते, भविष्य की कोई अशुभ आशंका सुना कर उसे टालने का उपाय भी बताते हैं। फिर तो जादू-टोना होगा, पूजा-पाठ होगा और न जाने बैटे-ठाले आपका कितना पैसा निकल जाएगा।

भगवान न करे। किसी के घर में कोई बीमार हो। लेकिन आदमी के साथ दुख-दर्द लगा ही रहता है। सुन लिया किसी के घर में कोई बीमार पड़ा है। ऐसे भी लोग कभी-कभी पहुँच जाते हैं जो चुटकी बजा कर सारा रोग हर लेने का दावा करते हैं। मुँह से अजब-सी आवाज़ निकालेंगे, झाड़-फूँक करेंगे, टोना-टोटका बाँधेंगे और इसी बहाने कुछ न कुछ पैसा झटक लेंगे। कभी-कभी इनका पूरा दल होता है। एक आया, अगर उसका जादू चल गया और आप फँस गए तो वाह वाह। नहीं तो किसी और का नाम वह बताएगा और ऐसा रूपक रचेगा कि आप उसे बुलाने के लिए मजबूर हो जाएँगे। वह तैयारी से आपके यहाँ पहुँचेगा। और अगर एक बार आपने हाथ रखने दिया, तो क्या मजाल कि आप बच कर निकल जाएँ।

आप अपने जानवर को हमेशा खूँटे से बाँध कर तो रखते नहीं। अक्सर ऐसा भी होता है कि जानवर चरते-चरते दूर निकल जाते हैं और रास्ता भूल जाने के कारण घर नहीं पहुँचते। इस बात की ख़बर लगनी चाहिए कि किसका जानवर खोया है। ऐसे लोग भी पहुँच जाते हैं जो नाक से साँस ले कर या हवा में धूल उड़ा कर अथवा और किसी तरह से जानवर खोने की दिशा और कभी-कभी तो उसके काल्पनिक अथवा सही चुराने वाले का रंग, रूप और उम्र तक बताने लगते हैं। प्रकट है कि उनकी इस बात में तनिक भी सचाई नहीं होती, लेकिन इसी बहाने वे कुछ न कुछ ऐंठ ले जाते हैं। अगर हाथ फैला कर माँगते, तो आपको देने में संकोच होता और उनकी अप्रतिष्ठा भी होती। इस तरह इज्ज़त की इज्ज़त बची रही और काम भी बन गया।

आप में से बहुतों ने देखा होगा कि कभी-कभी कुछ लोग पूरे परिवार के साथ दल-बल बाँधे और अपनी गृहस्थी अपने कन्धों पर लटकाए या सर पर रखे एक जगह से दूसरी जगह पहुँचते हैं। इनका कोई अपना पेशा नहीं। पूछिए तो अपना घर-द्वार नहीं

बताएँगे। फ़क़ीरी में पैदा होते हैं, बढ़ते हैं, शादी-ब्याह होता है, बच्चे पैदा होते हैं और बूढ़े होते हैं। इसी तरह इनकी फ़क़ीरी चला करती है। जहाँ टिक गए, बच्चे, बूढ़े, औरत, मर्द, सब के सब किसी न किसी बहाने मांग कर अपना पेट भरेंगे और दूसरे स्थान की राह लेंगे। ऐसे सब लोगों के बारे में कोई राय कायम करना तो शायद उचित न हो, लेकिन अभी हाल में कुछ ऐसी बातों का भी पता चला है जिनसे मालूम पड़ता है कि इस तरह के कुछ घूमनेवाले दिन में जहाँ फ़क़ीर बनते हैं, रात को लोगों के घर भी लूट लेते हैं।

फ़क़ीरों की बात चल रही है तो एक तरह के फ़क़ीरों की और चर्चा कर दी जाए। कभी-कभी कोई अकेला साधु गाँव में पहुँच जाता है। वह या तो किसी मन्दिर के पास अड्डा जमा लेगा या फिर गाँव के बीचोबीच बड़ या पीपल का कोई पेड़ हुआ, तो उसके नीचे धूनी रम जाएगी। न किसी से बोलना, न कुछ माँगना। भोले-भाले, विश्वासी व्यक्ति आकर्षित होते हैं। धीरे-धीरे सम्पर्क बढ़ता है और लोगों की श्रद्धा बढ़ने के साथ-साथ बाबा जी की माँग भी बढ़ती जाती है। अन्त में एक दिन वह घोषणा करते हैं कि बिना भण्डारा किए वे गाँव से हटेंगे नहीं। इसके बाद किस तरह लोगों की गाँठ पर असर पड़ता है और किस तरह बिना मेहनत की कमाई खाने वाले गुलछर्रे उड़ाते हैं, यह अनुभव की चीज़ है।

मैदानों में तो कम, लेकिन उत्तर प्रदेश के पहाड़ी ज़िलों में एक तरह के माँगनेवाले गाँव में और पहुँचते हैं। ये गेरुवा वस्त्र पहने साधुनियाँ होती हैं। यह सही है कि यदि इनके पुराने इतिहास को देखा जाए, तो इसमें बहुत-सी ऐसी मिलेंगी जो पारिवारिक कष्टों के कारण या अन्य किसी कारण से इस रास्ते को अपनाती हैं। लेकिन यह भी सही है कि अगर माँगने का यह रास्ता उन्होंने न अपनाया होता, तो भी उनकी ज़िन्दगी इज्ज़त के साथ बीत सकती थी। इन साधुनियों के मठ होते हैं, जिन्हें उधर सढ़ी कहते हैं। एक साधुनी मठ की गुरू होती है और उसकी चेलियाँ फ़सल के मौके पर गाँव-गाँव घूमती हैं और हर दरवाज़े पर जा कर अलख जगाती हैं। पता नहीं कब से यह प्रथा चल निकली है। प्रत्येक घर से केवल एक मुट्ठी अन्न से ही उनके मठों ने बड़ी भारी सम्पत्ति जोड़ ली है। बड़े-बड़े भण्डारे होते हैं, यहाँ तक कि लोगों को सूद पर कर्ज़ भी दिया जाता है। ऐसी हालत में इस भिक्षाटन को अगर रोज़गार न कहा जाए तो फिर क्या कहें।

अब तक मैंने जिन माँगने-खानेवालों की चर्चा की, वे सब ऐसे हैं जो स्वयं परिश्रम नहीं करते और दूसरों की मेहनत की कमाई बिना हाथ पैर हिलाए, धोखा दे कर, या गिड़गिड़ा कर या फिर कोई प्रपंच रच कर हड़पा करते हैं। मैं समझता हूँ कि ऐसे लोगों को खिलाना दया और पुण्य का काम नहीं है। आज हम श्रम की पूजा में लगे हैं और उसके द्वारा इस देश की लक्ष्मी और श्री को प्रसन्न करना चाहते हैं। ऐसे समय में परिश्रम से भागने-वाले और भागने के बाद भी मौज की जिन्दगी बितानेवाले दया के नहीं, श्रद्धा के भी नहीं, बल्कि उपेक्षा और घृणा के पात्र हैं। उन्हें भीख देना या इनकी चंगुल में फँसना काहिली को, अकर्मण्यता को बढ़ावा देना है।

लेकिन इस सब का यह अर्थ नहीं कि भिखारियों में दया और करुणा के पात्र व्यक्ति होते ही नहीं। ऐसे भिखारी मिलते हैं जो शरीर से अपंग हों और जिनका कोई सहारा न हो या इतने वृद्ध हों कि किसी प्रकार का परिश्रम न कर पाते हों। ऐसे लोगों को सहायता की आवश्यकता है। यह सहायता भिक्षा नहीं हो सकती। यह सहायता दे कर हम उनके ऊपर कोई अहसान नहीं करते। यह उनका सामाजिक अधिकार है। उसकी पूर्ति होनी चाहिए और ऐसे व्यक्तियों की मदद कर के हमें दान देने के बाद की तृप्ति नहीं, अपने कर्त्तव्य के पालन करने का सन्तोष मिलना चाहिए।

—[लखनऊ से प्रसारित]

★

खेती-बाड़ी के औज़ार — [पृष्ठ ११ का शेषांश]

सरल है। सुधार की दृष्टि से इसमें पीछे का भाग जो ७-८ इंच तक होता था, वह घटा कर कम कर दिया गया है। दाँते को नीचे से तिकोना बना दिया गया है जिससे चलाते समय आसानी से हिला-डुला सकते हैं। इसकी कैरिज पीछे की ओर दाँते के पास से अन्दर की ओर गोलाई लिए हुए होती है और सामने से ऊपर की ओर गोलाई लिए हुए उठती हुई बनाई गई है। यह छोटे-बड़े किसी भी तरह के बैलों पर आसानी से लादा जा सकता है और वज़न में काफ़ी हल्का होता है।

५. पशु-शक्ति द्वारा संचालित यन्त्रों में जुए का जिक्र न किया जाए, तो यह वर्णन अधूरा ही रहेगा। महाराष्ट्र में काम में आने वाले जुए की भी विशेषता है। यह अपनी एक खास रचना के कारण बैलों के कन्धों पर पकड़ के साथ फिट बैठता है जिसकी वजह से इसके द्वारा बैल अपनी पूरी ताकत लगा कर काम करते हैं। किसी किस्म की कोई तकलीफ़ इसके द्वारा बैलों को नहीं होती जबकि अन्य प्रान्तों में चलने वाले जुए बैलों के कन्धों में गड़ते हैं और कभी-कभी भारी ज़ख्म भी कर देते हैं। इससे बैल को काफ़ी तकलीफ़ उठानी पड़ती है और उसकी ताकत का पूरा इस्तेमाल नहीं हो पाता। इसकी लम्बाई साढ़े पाँच फुट होती है और कन्धों पर चौड़ाई १० इंच होती है। इसकी बनावट काफ़ी मज़बूत होती है। हल्के व भारी, दोनों तरह के काम इसी से किए जा सकते हैं।

आज देश ने ली अंगड़ाई

गिरिजाशंकर तिवारी "गिरिजेश"

आज देश ने ली अंगड़ाई, आज जगा है हिन्दुस्तान !
कदम बढ़ाओ, स्वेद बहाओ, सीना तान करो श्रमदान !!

गाँव गाँव में पाँच साल की नई योजना फैले,
आलस की गलियों में, भाई नई ज़िन्दगी खेले।
नए खाद औ नए बीज से धरती का सत्कार करो,
लहरा दो धानी आँचल, फल फूलों से शृंगार करो।
आज गुंजा दो मेड़ों पर तुम, झाँझ चाँग करतालें,
आओ हिल-मिल आज रंग में, लोक गीत हम गा लें।
धरती माँ का पूत, देश का गौरव कृषक महान्।
उत्पादन का शंख बजा दो, मेरे नए किसान !

मेहनत का रंग घोल, बदल दो, अपनी धुंधली काया,
आज देश को तुम्हें बदलना, नया ज़माना आया।
पंचायत के पंच प्रभु हैं, न्याय-देवता प्यारे,
पंचायत-मन्दिर सुलझाएं, उलझे तार हमारे।
गाँव स्वर्ग बन जाय, यही हो लक्ष्य हमारा प्यारा,
ज्ञान मन्दिरों के द्वारा, मिट जाय अँधेरा सारा।
सुकुमारों के शिक्षणार्थ, बन गए नए संस्थान,
माताओं, बहनों का भी करना है अब उत्थान।

सदियों के बंधन टूटे, फौलादी सीना तानो,
नए खून में जोश है कितना, मेरे भाई जानो।
नव विकास की जली ज्योति, चमका है भाग्य सितारा,
कोटि कोटि फौलादी बाहें देश बदल दें सारा।
नदियाँ बाँध सिंचाई कर दो, दीप जलाओ घर-घर,
पर्वत काट बना दो राहें, मंजिल तय हो सर-सर।
नए देश के नए भाग का, कृषक करो निर्माण,
पत्थर में तुमको भरना है, जगमग करते प्राण।

आज देश ने ली अंगड़ाई, आज जगा है हिन्दुस्तान !
कदम बढ़ाओ, स्वेद बहाओ, सीना तान करो श्रमदान !!

नया साथी

"ताऊ, राम ! राम !!" एक नवयुवक साइकिलवाले ने एक बूढ़े गाड़ीवान से कहा। गाड़ीवान ने झट गाड़ी रोक कर नवयुवक से बातचीत शुरू कर दी। क्या आप जानते हैं कि यह नवयुवक कौन है ? यह और कोई नहीं, गाँव का ग्राम सेवक ही है। अपनी साइकिल पर सवार हो कर वह हर जगह गाँववालों से मिलता रहता है—भले ही वे अपने खेत में हल चला रहे हों या घर में विश्राम कर रहे हों।

इस समय देश भर में लगभग १७,००० ग्राम सेवक हैं। आशा है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक उनकी संख्या बढ़ कर ५०,००० हो जाएगी।

छाया में विश्राम

मैं पढ़-लिख क

एक ग्राम सेविका गाँव

नूँगा

श्रम का वरदान

ों और बच्चों के साथ

गाँव की पंचायत

ऊपर मैसूर राज्य के मांड्या जिले के एक गाँव की पंचायत का दृश्य है। सबसे दाईं ओर है ग्राम सेवक जो पंचायत को अपना काम-काज चलाने में सहायता और सलाह देता है। महीने में कम से कम दो बार पंचायत की बैठक होती है। जिसमें गाँव की रोज़मर्रा की समस्याओं पर विचार किया जाता है।

आजकल देश में १,२५,००० से भी अधिक पंचायतें हैं जो हमारे गाँवों के जीवन का ढाँचा ही बदल रही हैं। गाँवों की सफाई, आने-जाने के रास्ते, पीने के पानी की व्यवस्था, जन-स्वास्थ्य, कृषि और शिक्षा व्यवस्था में सुधार करने में इन पंचायतों का बहुत बड़ा हाथ है।

जागरण

रमाबल्लभ प्रसाद

पात्र परिचय

गालू—एक निर्धन किसान
सुमुखिया—गालू की पत्नी
चन्दा—गालू की लड़की
बुझावन काका—कथावाचक और पंचायत का सदस्य
लछमन, शुकरा—गाँव के बिगड़े हुए दो शराबी और जुआरी
चन्द्रशेखर—ग्राम रक्षा दल का कप्तान
ग्राम सेवक
मुखिया जी

दृश्य १

स्थान—गालू का घर

[फूस की एक टूटी-फूटी झोंपड़ी। गालू की बीमार पत्नी खाट पर लेटी हुई है और चन्दा उसकी तीमारदारी में व्यस्त है। गालू बाहर बैठ कर डंठल से लाख निकाल रहा है]

गालू—इस घर में भूत का उपद्रव बढ़ गया है। एक अच्छा होता है, तो दूसरा पड़ जाता है। छोटे लड़के की जान उसने ले ही ली। लगता है सुमुखिया को भी वह नहीं छोड़ेगा। अच्छा, इस बार एक बढ़िया ओझा को ला कर दिखाते हैं। शायद, उसके पूजा-पाठ से भूत पर कुछ असर पड़े।

सुमुखिया—(**कराह कर**) आह! भूख से जान निकल रही है। चन्दा! कुछ खाने को दे।

गालू—हूँ! ज़रा अच्छी हुई कि खाने के लिए चिल्लाना शुरू कर दिया। ग्राम सेवक अभी देखने के लिए आएगा। यदि उसने बता दिया तो खाना दिया जाएगा। देख चन्दा! मुझ से बिना पूछे माँ के आगे थाली मत बढ़ा दीजो। यदि अपने आप खा कर सुमुखिया फिर बीमार पड़ी, तो मैं कुछ नहीं जानता..... फिर मेरी तरफ़ से चाहे मरे या जीए।

[ग्राम सेवक का प्रवेश]

ग्राम सेवक—राम, राम! गालू भाई!

गालू—(**उठ कर**) राम राम ग्राम सेवक जी, अभी तो हम आप ही का ज़िक्र कर रहे थे।

ग्राम सेवक—लीजिए मैं आ गया। अच्छा बताओ, चन्दा की माँ अब कैसी है? फिर बुखार तो नहीं हो गया?

गालू—ग्राम सेवक जी! कल शाम को इसे बहुत पसीना आया। तब से यह अच्छी दिखती है और खाने के लिए शोर मचा रही है। औरत का पेट ही चंचल होता है।

ग्राम सेवक—देखो गालू, बीमारी से अच्छा हो जाने पर सब को ज़ोर की भूख लगती है। चन्दा की माँ अब अच्छी हो रही है। अच्छा पैल्यूड्रीन की जो चार गोलियाँ मैंने कल दी थीं, क्या उसने सब खा ली हैं?

गालू—हाँ, दो तो उसने खा ली हैं और दो अभी पड़ी हैं। कहती है कि यह सब दवाई कड़वी लगती है। दवाई खाते समय थू-थू करने लगती है। हम तब झट इसे पानी पिला देते हैं। इस डर से कि कहीं दवाई न उगल दे।

ग्राम सेवक—देखो गालू! कड़वी दवाई भी बहुत फ़ायदा पहुँचाती है। यह सब दवाई खा कर झट थोड़ा-सा पानी भी पी लेना चाहिए। चन्दा की माँ अब करीब-करीब अच्छी हो गई है। आज उसे चावल का पथ्य दे देना।

गालू—ग्राम सेवक जी, हमारे घर में भूत घुस गया है। कोई

न कोई बीमार बना रहता है। हम अब इससे ऊब गए हैं। यदि आप किसी अच्छे ओझा को जानते हों तो बताएँ। हम उससे पूजा-पाठ कराएँगे, तभी हमारे घर में शान्ति होगी।

ग्राम सेवक—गालू भाई, तुम्हारी बातों पर मुझे हँसी आती है। बीमारी भूत के कारण नहीं होती, बल्कि गन्दगी से अथवा मच्छरों के काटने से होती है। चन्दा की माँ को मलेरिया के मच्छरों ने काटा है। इसी कारण उसे बुखार आता है।

गालू—ग्राम सेवक जी, आप पढ़े-लिखे लोग तो यही कहते हैं। लेकिन हमारे बाप-दादा का विश्वास, ज़माने से इसी भूत-प्रेत की पूजा में है। वे कहते हैं कि हम इसी से अच्छे होते हैं।

ग्राम सेवक—पूजा-पाठ में यदि आपका विश्वास है, तो ठीक है। उसे कुछ हद तक मानिए। लेकिन भगवान भी यही चाहते हैं कि हर काम को आप समझ-बूझ कर, अपनी बुद्धि से करें, तभी आप सुख से रह सकते हैं। अन्ध-विश्वास के फेर में पड़ कर यदि आप जान गँवाएँगे, तो भगवान भी आपकी सहायता नहीं करेंगे।

गालू—तब पूजा-पाठ क्या हम सभी छोड़ दें? या आप ही बताइए कि हमारे घर में जो इस तरह एक न एक बीमार रहता है, उसका हम कौन-सा उपाय करें?

ग्राम सेवक—उपाय बहुत हैं। पैसा भी ज़्यादा खर्च नहीं होगा। आप और आपके परिवार के लोग सिर्फ साफ़-सुथरा रहने की आदत डालें, फिर कोई बीमार नहीं पड़ेगा। आप गन्दा पानी न पीएँ। पानी में अगर कीड़े होने का सन्देह हो तो सरकारी दवा-खाने से दवाई ला कर डालें। आप के घर के बगल में एक गड्ढा है, जिसमें पानी सड़ता रहता है और मच्छर उसमें अण्डे देते हैं। आप उसमें थोड़ा-सा किरोसिन तेल डाल कर उन सभी को मार दें और गड्ढों को भर दें।

गालू—पर मच्छर तो रात के अन्धेरे में काट लेता है। उसका क्या उपाय है?

ग्राम सेवक—उपाय यही है कि आप लोग मच्छरदानी लगा कर सोएँ। तब मच्छर नहीं काट सकेगा। आजकल डी० डी० टी० घर-घर में छिड़का जा रहा है, आप भी अपने घर में छिड़कवा लें।

गालू—तब तो हमने बड़ी गलती की है, नहीं तो हमारे घर में आज एक भी मच्छर न रहता। डी० डी० टी० छिड़कनेवालों का एक दल मेरे यहाँ आया था। लेकिन चन्दा की माँ ने कहा न जाने ये लोग किस-किस जाति के हैं, घर में प्रवेश करने से घर भ्रष्ट हो जाएगा।

ग्राम सेवक—देखो गालू भाई, छुआछूत का भाव हमारे मन का दोष है। भगवान के बनाए सभी आदमी एक से हैं।

गालू—दोष तो यह ज़रूर है, और हम भी ऐसा चाहते हैं कि हम लोगों में इस तरह का भेद-भाव न हो।

ग्राम सेवक—गालू भाई, आप बहुत समझदार हैं। हम फिर आप से जब मिलेंगे, तो एक सभा करके इस भेद-भाव को समाज से मिटाने की कोशिश करेंगे। अब आज्ञा दें।

गालू—आप को कहाँ जाना है?

ग्राम सेवक—अभी साधुचरण के यहाँ जाना है। वह जापानी तरीके से धान रोप रहा है। उसकी थोड़ी मदद करनी है। अगर उसने लाईन में लगा कर धान नहीं रोपा, तो रासायनिक खाद पूरा काम नहीं करेगा। आप चन्दा की माँ के लिए पथ्य का बन्दोबस्त करें।

[ग्राम सेवक का प्रस्थान]

गालू—चन्दा! अब हाट जाने का समय हो गया है। घर में जो कुछ लाख है, उसे ले ले, मेरा छाता भी निकाल ले।

चन्दा – अच्छा, लाती हूँ।

[पटाक्षेप]

दृश्य २

स्थान—हाट

[लाख खरीदने के लिए व्यापारी एक कतार में बैठे हैं। एक व्यक्ति बेचने के लिए मोल-तोल कर रहा है। चन्दा हाथ में लाख की टोकरी ले कर आगे बढ़ती है]

लाख का एक व्यापारी—**(चन्दा से)** लाख है क्या?

चन्दा—हाँ!

एक व्यापारी—कितना है?

चन्दा—करीब दो सेर।

एक व्यापारी—अच्छा देखें **(चन्दा अपनी गठरी खोल कर दिखाती है)**।

लाख का व्यापारी—**(हाथ में ले कर)** यह तो बहुत कच्चा है। एक रुपए सेर के दर से लूँगा।

चन्दा—मेरा सुखाया हुआ पुराना लाख है। मैं दो रुपए सेर से कम में नहीं बेचूँगी।

दूसरा व्यापारी—अच्छा लाओ। हम डेढ़ रुपए की दर से ले लेंगे। **(चन्दा उठ कर दूसरे व्यापारी के निकट जाना चाहती है। इतने में पहला व्यापारी उसकी गठरी पकड़ कर कहता है)** अच्छा हम डेढ़ रुपए के भाव से ले लेंगे **(शीघ्रता से तोलता है—तोल में कमी करता है)** यह डेढ़ सेर हुआ। सवा दो रुपए कीमत हुई, ले।

[चन्दा दीर्घ निःश्वास छोड़ कर रुपया रख लेती है। गालू का प्रवेश]

गालू—(**चन्दा से**) कितना पैसा मिला ?

चन्दा—सवा दो रुपए।

गालू—हूँ, दो सेर लाख का दाम सिर्फ दो रुपए। कितनी मेहनत से सुखा कर रखा था। अच्छा ला। (**चन्दा पिता के हाथ में रुपए दे देती है।**)

[**लछमन और शुकरा का प्रवेश**]

लछमन
शुकरा } (**एक साथ**)—राम, राम, गालू भाई !

गालू—राम, राम, भाई !

लछमन—गालू भाई आजकल तो तुम दूज का चाँद बन गए हो, कभी दर्शन तक नहीं देते।

गालू—हाँ, हाँ, आप क्या बने हो ? डूमर का फूल ! दिखाई भी नहीं पड़ते।

शुकरा—छोड़ो बकवास, गालू बेचारा क्या करे। चन्दा की माँ इसको छुट्टी अगर दे, तब तो यह कहीं घूमे-फिरे।

गालू—तुम सब को केवल मज़ाक ही सूझता है। जानते हो, चन्दा की माँ आज चार दिन से खाट पर पड़ी है। अभी तक कुछ खाया-पिया भी नहीं। उसी के लिए हाट से चावल खरीदने आया हूँ।

लछमन—हाँ भाई, आज कल के मौसम में तो घर-घर में मलेरिया फैला हुआ है। लेकिन इससे क्या ? अपने सगे-साथियों को लोग थोड़े भुला देते हैं। अरे गालू भाई ! चार दिन की ज़िन्दगी है, खूब खाओ-पीओ और मौज करो। मरने के बाद इस दुनिया का मज़ा न लूट पाओगे।

[**जुआरियों द्वारा पासा फेंकने की आवाज़—यह मारा, चार, चार नहीं छः**]

लछमन—(**पासा फेंकने की आवाज सुन कर**) अरे यार, आज तो जीतने का अच्छा मौका है। नया खिलाड़ी पहली बार खेल रहा है।

शुकरा—तब इस मौके से ज़रूर फायदा उठा लेना चाहिए।

गालू—अब भाई माफ़ करो। मुझे चावल खरीदने जाना है।

लछमन—बस भागने का मौका मिल गया। हम भी तो ज़रूरी काम से आए हैं। कितना पैसा ले कर आए हो ?

गालू—ज्यादा थोड़े हैं। अभी लाख बेचने पर सवा दो रुपए मिले हैं।

लछमन—तब दो के दस बना लो।

गालू—तब तो पौ बारह हैं। लेकिन यार मेरी तकदीर खोटी है। कभी एक साथ दस रुपए हाथ में नहीं आए।

शुकरा—गालू भाई ! आज हमारी किस्मत बहुत अच्छी है। नया-नया जुआरी आया है। पासा पड़ा तो हम सब सौ-सौ रुपए ले कर घर जाएँगे। दो रुपए से कुछ होने-जाने को नहीं।

लछमन—अरे यार ! हारे तो दो, और नहीं जीते तो दस। चल-चल, देरी करने से काम खराब होता है।

[**चन्दा दूर से देखती रह जाती है। तीनों जआरियों के पास पहुँचते हैं**]

पहला जुआरी—और तीन खिलाड़ी तशरीफ लाए हैं। ज़रा जगह दो इनको।

दूसरा जुआरी—एक, दो, तीन ! यह तीन जीता।

लछमन—(**दो रुपए फेंकता है, चार रुपए जीत लेता है**) यह मेरा दो, जीता चार !

गालू—(**दो रुपए कमर से निकाल कर फेंकता है**) यह दो, अरे !

[**हार जाता है। इतने में सब को पुलिस के आने का सन्देह होता है**]

पहला जुआरी—अरे भागो, पुलिस !

[**पासा छोड़ कर सब भागने की कोशिश करते हैं। गालू अपना-सा मुँह ले कर लछमन और शुकरा के साथ आगे बढ़ता है**]

लछमन—अरे चल, चार की बाज़ी हारा है। ज़रा पी कर जी तर कर ले।

शुकरा—इधर एक सप्ताह हो गया। जब से हाट नहीं आए, कुछ पीने-वीने को नहीं मिला।

गालू—अरे यार, हम तो सब हार गए, हम क्या उपाय करें ?

लछमन—देख गालू, हारजीत की यह दुनिया है। आज हारे हो, तो कल जीतोगे।

[**पटाक्षेप**]

दृश्य ३

स्थान—शराब की भट्टी

पहला शराबी—(**दुकानदार से**) और आधी बोतल दो।

दुकानदार—आधी बोतल तो दे ही रहा हूँ।

दूसरा शराबी—लो यह पैसा, आज मैं तुम्हारी भट्टी बिना खाली किए नहीं लौटूँगा।

दुकानदार—और हम तुम्हारी जेब और घर, सब खाली करा के छोड़ेंगे।

पहला शराबी—अरे देखते हो, भगवान का बनाया हुआ इतना बड़ा आसमान भी खाली पड़ा हुआ है। है कोई एक आदमी भी वहाँ—इसकी जेब क्या आसमान से बड़ी थोड़े ही है !

लछमन—(**दुकानदार से**) पूरी एक बोतल दो। हम लोग तीन साथी हैं।

दुकानदार—तब एक बोतल से क्या होगा ?

लछमन—अरे पीछे और लूँगा।

दुकानदार—पैसे बढ़ा।

लछमन—यह ले। **(एक रुपया निकाल कर देता है। दुकानदार लछमन को एक बोतल शराब देता है)** (गालू से)—गालू भाई ले मस्त हो कर पी ले और सब भूल जा।

गालू—अच्छा लाओ **(सभी पीते हैं और नशे में सिनेमा का गीत गाना शुरू कर देते हैं।)**

शुकरा—इतने से क्या होगा—हमको पूरी बोतल चाहिए।

लछमन—**(दुकानदार से)** दो बोतल और दे, हम सब बहुत भूखे हैं। **(दो रुपए फिर बढ़ा देता है)**।

दुकानदार—अच्छा ले। **(शराब में पानी मिला कर देता है। सभी फिर पीते हैं)**

गालू—**(नशे में)** आज चन्दा की माँ को खाना हरगिज़ नहीं देंगे, वह बहुत बीमार है।

लछमन—अरे उस चुड़ैल को रख कर क्या करोगे, मरने दो उसे। किसी दूसरी को ले आना।

शुकरा—अरे उसको मारने से क्या इसको फाँसी नहीं होगी ? देख गालू ! उसको भी रख, और एक दूसरी भी ले आ।

गालू—मेरी जोरू की तुम बेइज्जती करते हो। वह मुझे जान से भी ज्यादा प्यारी है। साला ! **(एक घूँसा शुकरा को और दूसरा लछमन को जड़ देता है। लछमन गालू का सर फोड़ देता है)**।

[चन्द्रशेखर का प्रवेश]

चन्द्रशेखर—**(तीनों को पकड़ कर ले जाता है)** शैतान के बच्चे, छीः, पी कर आपस में लड़ते हैं।

[पटाक्षेप]

दृश्य ४

स्थान—गान्धी चबूतरा

[मुखिया जी, बुझावन काका तथा अन्य ग्रामीण बैठ कर रामायण का पाठ सुन रहे हैं। बुझावन काका सब को अर्थ करके समझाते जाते हैं]

बुझावन काका—**(पढ़ते हैं)** :

जब जब होइ धरम कै हानी।
बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी॥
तब तब प्रभु धरि मनुज सरीरा।
हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा॥

एक ग्रामीण—अहह ! बुझावन काका, इस चौपाई का मतलब ज़रा विस्तार से बताइए।

बुझावन काका—देखो भाई, यहाँ तुलसीदास जी बड़ी गम्भीर बात कह रहे हैं। वह कहते हैं कि जब-जब दुनिया में धर्म के प्रति लोगों का ख्याल कम होता जाता है, तो पाप भी बढ़ता जाता है और पापी तथा अन्यायी और अभिमानियों का बोलबाला हो जाता है। इसलिए भगवान दुनिया में धार्मिक तथा भले लोगों को पापियों से बचाने के लिए मनुष्य का अवतार ले कर धर्म की रक्षा करते हैं। यही बात भगवान ने गीता में भी कही है कि जब-जब धर्म पर कोई संकट आएगा तो धर्म को बचाने के लिए मैं अवतार लूँगा।

एक ग्रामीण—आज की दुनिया में तो बुझावन काका धर्म और पाप क्या हैं—लोग कुछ मानते ही नहीं हैं। मेरी समझ में धर्म का सूरज तो कब का डूब चुका। देखिए न कल ही लछमन और गालू ने आपस में शराब पी कर मार-पीट की। आज ही उनका मुकदमा मुखिया जी के यहाँ पेश है।

दूसरा ग्रामीण—मुखिया जी और बुझावन काका, ज़रा मेरी बात ध्यान से सुन लीजिए, फिर आप लोगों को जो कुछ फैसला करना हो, सो करें। गालू और लछमन की हरकतें गाँव में रोज़-रोज़ बढ़ती ही जा रही हैं। एक ज़माना था कि अपने गाँव में हम लोग शराब और जुए का नाम तक भी नहीं सुनते थे और आज, कुल-बोरन सब बढ़-बढ़ कर अपना पैसा तथा चरित्र तो बिगाड़ ही रहे हैं, साथ-साथ इनकी कुसंगति का बुरा असर हम लोगों के बाल-बच्चों पर भी पड़ने के लक्षण दिखाई दे रहे हैं। यदि अभी से इनकी रोक-थाम नहीं की गई, तो हम लोगों का धर्म और इज्जत रखना मुश्किल हो जाएगा।

एक ग्रामीण—मेरे विचार में तो इन लोगों को छः-छः महीने की सजा सुना कर जेल की हवा खाने भेज दिया जाए, तभी हम लोग शान्तिपूर्वक रहेंगे।

मुखिया जी—देखो भाई, इन लोगों की क्या गलती है, यह मुझे अच्छी तरह अभी मालूम नहीं हुआ। अभी सब लोग यहाँ आनेवाले हैं। तभी पूरी बात का पता चलेगा।

[गालू, लछमन, ग्राम सेवक, चन्द्रशेखर का प्रवेश। सभी मुखिया जी तथा अन्य प्रतिष्ठित ग्रामीणों को नमस्कार करते हैं]

सभी—नमस्कार मुखिया जी, नमस्कार बुझावन काका !

मुखिया जी—नमस्कार भाई, नमस्कार ! आप लोग सभी अच्छी तरह बैठ जाएँ।

[सभी बैठ जाते हैं]

मुखिया जी—**(ग्राम सेवक से)** अच्छा ग्राम सेवक जी, आप बताइए कि यह झगड़ा-फसाद लछमन और गालू के बीच कैसे हुआ ?

ग्राम सेवक—मुखिया जी, लड़ाई-झगड़े का तो कोई विशेष कारण नहीं था। कल हाट का दिन था। गालू अपनी लड़की

चन्दा के साथ हाट करने गया था। इसको लाख बेच कर कुछ खरीदना था। लछमन और शुकरा से इसकी भेंट हाट में हुई। लछमन के बहकाने पर गालू और शुकरा ने जुआ खेला। फिर, इन तीनों ने मिल कर शराब की भट्टी में जा कर पीना आरम्भ किया, नशे में आ कर आपस में गाली-गलौज की और फिर मारपीट भी हुई। यह सब काण्ड जुआ खेलने तथा शराब पीने के कारण हुआ है। रक्षा दल का कप्तान चन्द्रशेखर यदि वहाँ नहीं पहुँचता, तो इनमें से किसी एक की जान तक जा सकती थी। चन्द्रशेखर जब इन सब को गिरफ्तार कर के ला रहा था, तभी बुझावन काका ने यह कह कर इन सबों को छुड़ा दिया कि कल पंचों द्वारा इनका फैसला होगा। सब को सूचित कर दीजिए।

मुखिया जी—(**गालू और लछमन से)** ग्राम सेवक जी ने अभी जो कुछ बयान किया, क्या यह सब सच है ?

गालू } **(मुखिया जी का पैर छू कर)** सब सच है मुखिया जी!
लछमन } हम सब अपनी गलती कबूल करते हैं।

मुखिया जी—अच्छा, बैठो।

गालू—मुखिया जी, अब मेरी आँखें खुल गईं। अपनी बुरी आदत से हमें बहुत तकलीफ़ झेलनी पड़ी। यह ग्राम सेवक जी मेरे लिए देवता के माफिक हैं। इन्हीं की दवाई से चन्दा की माँ अच्छी हुई है। मेरा जब सिर फूटा, तो इन्होंने मेरी मरहम पट्टी की; जुए में जब मैं सब पैसे हार चुका था, घर में खाने का कोई सामान नहीं था, तो इन्होंने कोआपरेटिव की दुकान से चावल दिला दिया। हमें अब काली मण्डप में शपथ दिला दी जाए। हम कभी शराब नहीं पिएँगे, जुआ नहीं खेलेंगे।

लछमन—मुखिया जी, मेरा गालू से ज्यादा कसूर है। गालू को बुरे रास्ते पर लाने के लिए मैं ही जिम्मेदार हूँ। मैं अपनी गलती महसूस करता हूँ।

मुखिया जी—**(पंचों से)** अब पंच लोग यह बताएँ कि इन लोगों को क्या आज माफ़ कर दिया जाए ? ये लोग फिर ऐसा काम न करने की शपथ ले रहे हैं।

बुझावन काका—लछमन शहर में जा कर यह सब सीख आया है। खैर, जब यह कह रहा है कि आगे से ऐसा खराब काम नहीं करेगा, तो इन सब को माफ़ कर दिया जाए।

मुखिया जी—देखो गालू और लछमन, ज़रा मेरी बातों को ध्यान दे कर सुनो। शराब पीना या जुआ खेलना, यह सबसे बड़ा पाप है। इससे तुम्हारा पैसा बरबाद होता है, तुम्हारा स्वास्थ्य खराब होता है, जिस पैसे को तुम अपने बच्चों की पढ़ाई अथवा दवादारू आदि अन्य ज़रूरी बातों पर खर्च कर सकते हो, उसको आज तुम खराब कामों में बरबाद करते हो। धीरे-धीरे पैसा न रहने पर तुम्हें चोरी करने की भी आदत पड़ सकती है। एक बुरी आदत लग जाने से आदमी दूसरी बुरी आदत का भी शिकार बन जाता है। इससे तुम लोगों की ही बदनामी नहीं है, बल्कि इस धरमपुर गाँव के सारे लोगों की बदनामी होती है। दूसरे गाँवों के लोग अब यही समझेंगे कि धरमपुर के लोग जुआरी और शराबी हैं; इसलिए इन लोगों के घर में शादी-विवाह नहीं करना चाहिए।

लछमन और गालू—हम लोगों ने तो यह निश्चय कर लिया कि इस धरमपुर गाँव में आज से हम लोग न तो स्वयं जुआ खेलेंगे और न किसी को खेलने देंगे।

ग्राम सेवक—**(उठ कर)** देखो गालू भाई, यह बहुत खुशी की बात है कि आज से आप लोगों ने जुआ खेलना अथवा शराब पीना छोड़ देने का निश्चय कर लिया है। हम तो अब यही आशा कर रहे हैं कि अब यदि आप लोग अपने समय का सदुपयोग करेंगे, तो बहुत शीघ्र आप लोग विकास पथ पर आगे बढ़ जाएँगे। मेरा तो आप लोगों से यही अनुरोध है कि गाँव में कताई, बुनाई और वयस्कों को पढ़ाने का स्कूल खुल गया है, आप लोग यदि दो घण्टा रोज वहाँ बैठ कर नया काम सीखें, तो आप जल्द अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं। अभी आप लोगों को बच्चों को पढ़ाने का खर्च जुटाना है, नया घर बनाना है। पर यह सब तभी सम्भव है, जब आप की आमदनी बढ़े।

गालू—ग्राम सेवक जी, हमारा बहुत समय बेकार जाता है, हम कपड़ा बनाने का काम सीखना चाहते हैं। चन्दा को कल से हम चरखा चलाना सिखाने के लिए शिल्पालय में भेज देंगे और चन्दा की माँ जब अच्छी हो जाएगी, तो उसे भी सिखा देंगे।

मुखिया जी—अच्छा भाई अब चलें। राम ! राम !!

सब—राम ! राम !

[पटाक्षेप]

★

भारतीय गाँवों का कायाकल्प

प्रभाशंकर मेहता

"आयोजित विकास की दिशा में आज भारत में जो कुछ हो रहा है, वह ऐतिहासिक दृष्टि से अभूतपूर्व है। पश्चिमी यूरोप के देशों ने, जिनमें से कुछ को अधीन उपनिवेशों की भी सहायता प्राप्त थी, लगभग २०० वर्षों में अपनी महान औद्योगिक सभ्यता का निर्माण किया। इसी प्रकार रूस जैसे अन्य देशों को भी भारी कठिनाइयाँ झेलने के बाद सफलताएँ प्राप्त हुईं। किन्तु भारत, भारतवासियों के जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने के लिए शान्तिपूर्ण एवं लोकतन्त्रात्मक उपायों से काम ले रहा है। हमें विश्वास है कि हम सफलतापूर्वक ऐसा कर सकते हैं। मेरी इस मान्यता का आधारभूत कारण है भारतवासियों की सामर्थ्य में मेरा अटूट विश्वास"—ये शब्द हैं श्री जवाहरलाल नेहरू के, जो शान्तिपूर्ण तथा लोकतन्त्रात्मक उपायों में उनके दृढ़ विश्वास के द्योतक हैं। वास्तव में, इतिहास इस बात का साक्षी है कि जिस रूप में देश के विकास तथा उत्थान का आयोजित प्रयत्न भारत में किया जा रहा है, उसका प्रयोग इतने बड़े पैमाने पर पहले कभी कहीं नहीं हुआ।

महात्मा गान्धी चाहते थे कि भारत में एक ऐसे आदर्श शान्तिपूर्ण राज्य की स्थापना हो जिसे सही रूप में रामराज्य की संज्ञा दी जा सके। विदेशी शासक उनकी इस इच्छा की पूर्ति के मार्ग में बाधा स्वरूप थे। तभी उन्होंने इस बाधा को दूर करने के लिए 'भारत छोड़ो' का नारा लगाया। आज बापू नहीं हैं, किन्तु उनकी वह इच्छा पूरी करने का प्रयत्न शिथिल नहीं हुआ है।

जन-कल्याणकारी राज्य

देश की बागडोर सँभालने के बाद राष्ट्रीय सरकार ने सही अर्थ में जन-कल्याणकारी राज्य की स्थापना करने का लक्ष्य अपने सामने रखा। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वह पूरे ज़ोर से जुट गई। सरकार का यह प्रयत्न पहली और दूसरी पंचवर्षीय योजनाओं के रूप में संसार के सामने आया। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि वास्तव में उद्देश्य आर्थिक दृष्टि से भारत का कायाकल्प करना हो, तो सबसे पहले और सबसे अधिक ध्यान देश के उन ८२.५ प्रतिशत भारतीयों की ओर देना होगा, जो गाँवों में बसते हैं। अंग्रेजों के शासन काल में शिक्षा, व्यापार, उद्योग आदि के विकास के कारण शहरों में रहनेवालों की स्थिति अपेक्षाकृत अच्छी थी, किन्तु अधिकांश ग्रामवासियों—किसानों की स्थिति अत्यन्त शोचनीय हो गई थी और वे अभाव तथा अज्ञान की साक्षात मूर्ति-मात्र रह गए थे। अतः यह उचित ही हुआ कि प्रथम योजना में सबसे अधिक ध्यान इन उपेक्षितों की ओर दिया गया और उनके रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए छोटी-बड़ी योजनाएँ हाथ में ली गईं।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम

एक ऐसा कार्यक्रम भी बना, जो क्रान्तिकारी कहा जा सकता है और जिसके सफल सम्पादन पर ही देश की पंचवर्षीय योजनाओं की सफलता काफी हद तक निर्भर है। यह कार्यक्रम सामुदायिक विकास कार्यक्रम के नाम से विख्यात है। इसका उद्देश्य लोगों को अपने उद्धार के लिए स्वयं प्रयत्न करने की प्रेरणा देना है। इसके अन्तर्गत जिन बातों पर ज़ोर दिया जाता है वे ये हैं—भूमि सुधार, सिंचाई के छोटे-मोटे काम, बुवाई के लिए अच्छे बीजों की उपलब्धि, खेती के तरीकों में सुधार, पशुओं की चिकित्सा में सहायता, खेती के औजारों में सुधार, हाट-व्यवस्था तथा ऋण-व्यवस्था में सुधार, पशु-पालन तथा पशुओं की नस्लें सुधारने के लिए केन्द्रों की स्थापना, भूमि की उर्वरा-शक्ति के विषय में गवेषणा, खाद की उपलब्धि, देश में मत्स्य-केन्द्रों का विकास, फलों तथा तरकारियों की खेती, सड़कों का निर्माण, यातायात-व्यवस्था में सुधार, अनिवार्य तथा निःशुल्क प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था, पाठशालाओं की स्थापना, चिकित्सा सुविधाओं की व्यवस्था, तरह-तरह के हुनर सिखाने की व्यवस्था, घरेलू तथा छोटे उद्योगों का विकास, आवास व्यवस्था, ग्रामवासियों के ज्ञानवर्धन तथा मनोरंजन की व्यवस्था, सहकारी संस्थाओं तथा पंचायतों की स्थापना आदि।

इस कार्यक्रम का श्रीगणेश २ अक्टूबर १९५२ को हुआ। २ अक्टूबर भारत के लिए ऐतिहासिक महत्व का दिन है, क्योंकि इसी दिन राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी का जन्म हुआ था। राष्ट्रपति ने इस कार्यक्रम का उद्घाटन किया और प्रधान मन्त्री, मन्त्रिगण तथा अन्य गण्यमान्य व्यक्ति आस्तीने चढ़ा कर और कुदाली-टोकरी ले कर खेत में उतर आए। वास्तव में ग्रामवासियों की चिर-निद्रा को भंग करके उन्हें काम में जुटने की प्रेरणा देने का यह अनूठा ढंग था। वे भी काम में सम्मिलित हो गए और बात की बात में स्थान-स्थान पर सड़कें, नई पाठशालाएँ सामुदायिक केन्द्र, अस्पताल, पंचायतघर आदि बन कर तैयार होने लगे। जन-जन में एक नई स्फूर्ति तथा नया उत्साह दिखाई देने लगा। सरकारी कर्मचारी, जो पहले निरीह ग्रामवासियों के लिए एक हौआ-सा

था, अब उनका साथी बन गया; वह उनका मार्गदर्शन करने लगा, आवश्यक सहायता प्रदान करने लगा और उनके साथ कन्धे से कन्धा मिला कर भूख, रोग और अज्ञान का मुकाबला करने लगा।

सामुदायिक विकास और विस्तार-कार्य

सबसे पहले ५५ विकास-खण्डों में सामुदायिक विकास कार्य आरम्भ किया गया। इसके प्रति लोगों ने जो रुचि दिखाई, उससे कार्यक्रम के संचालकों को प्रोत्साहन मिला। कार्यक्रम को और अधिक उपादेय बनाने के लिए दो रूपों में कार्य करने का निश्चय किया गया—सामुदायिक विकास कार्य और राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्य। दोनों का उद्देश्य यद्यपि एक ही है, किन्तु उनके रूप और आयोजन में अन्तर है। राष्ट्रीय विस्तार खण्डों में लोगों को विकास-कार्यों के प्रति सचेष्ट बनाने के लिए परिचयात्मक और प्रारम्भिक कार्य हाथ में लिए जाते हैं। इनके परिणामस्वरूप यदि उन खण्डों के लोगों में उत्साह पैदा होता है और वे कुछ बड़े कार्य करने के लिए तत्पर होते हैं, तो उन्हीं खण्डों को भरपूर विकास-कार्य के लिए सामुदायिक विकास-खण्डों में बदल दिया जाता है। राष्ट्रीय विस्तार सेवा का फैलाव कम है और सामुदायिक विकास-कार्य का अधिक। एक सामुदायिक-विकास खण्ड पर तीन वर्ष में १५ लाख रुपया खर्च होता है, जबकि राष्ट्रीय विस्तार खण्ड पर ७॥ लाख रुपया। यह रुपया खण्ड के विविध विकास कार्यों पर व्यय किया जाता है और प्रयत्न यह रहता है कि खण्ड के अधिकाधिक लोग विकास-कार्यों में भाग लें और उनकी पूर्ति में योग दें।

जन-सहयोग

इस कार्यक्रम में स्थान-स्थान पर लोगों का जो सहयोग मिला है, वह योजना प्रणेताओं एवं संचालकों, दोनों के लिए बहुत उत्साहवर्धक है। बताया गया है कि सितम्बर, १९५६ तक भूमि, नकदी तथा श्रम के रूप में लोगों से ३३ करोड़ रुपए के मूल्य की सहायता प्राप्त हुई, जबकि उक्त अवधि में सरकार का लगभग ५६ करोड़ ३० लाख रुपया व्यय हुआ। इससे स्पष्ट है कि सरकारी व्यय की तुलना में लोगों के सहयोग एवं सहायता का मूल्य लगभग ५९ प्रति शत रहा। स्वेच्छा से विकास कार्यों में भाग ले कर लोगों ने इस कार्यक्रम के प्रति अपनी लगन तथा विश्वास प्रकट किया है। एक विशेषता यह है कि अधिकतर श्रमदान छोटे किसानों और भूमिहीन मजदूरों ने दिया।

सफलताएँ

सितम्बर १९५६ के अन्त तक २,२२,००० गाँवों के लगभग १२ करोड़ ९९ लाख निवासियों तक यह कार्यक्रम पहुँच चुका था। इनमें से ३६ प्रतिशत गाँवों में भरपूर विकास-कार्य और बाकी में राष्ट्रीय विस्तार सेवा के अन्तर्गत कार्य हो रहा था।

३० सितम्बर, १९५६ तक इस कार्यक्रम के अन्तर्गत गाँवों में कुल ३८,००० पंचायतें तथा ४६,००० ग्राम परिषदें, विकास मण्डल आदि स्थापित हो चुके थे। मनोरंजन केन्द्रों और पुस्तकालयों को मिला कर कुल १,५५,००० सामुदायिक केन्द्र खोले गए।

उपज में वृद्धि

अनुमान लगाया गया है कि सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा क्षेत्रों में कृषि उपज में २० से २५ प्रतिशत तक वृद्धि हुई। दूसरी पंचवर्षीय योजना के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए कई तरह के उपाय किए गए हैं, जैसे विकास खण्डों में उपज के लक्ष्य निर्धारित करना, उर्वरकों का उपयोग बढ़ाना, बढ़िया बीज पैदा करने के लिए फारमों की संख्या बढ़ाना आदि।

सितम्बर १९५६ तक १,४०,२६,००० मन उर्वरक और ६१,४६,००० मन बढ़िया बीज किसानों में बाँटे गए। २,१६,००० एकड़ में फल और ५,५७,००० एकड़ में तरकारियाँ लगाई गई हैं।

पशु-पालन के लिए ५,८३८ मुख्य ग्राम-केन्द्र खोले जा चुके हैं, जिनमें १,०५,०३,१४६ पशुओं को खूनी दस्तों की बीमारी से बचाया गया।

सहकारी समितियाँ

सामुदायिक विकास कार्यक्रम में सहकारी कार्य-प्रणाली पर बहुत जोर दिया गया है। कुल मिला कर ४१,००० सहकारी समितियाँ स्थापित की जा चुकी हैं, जिनकी सदस्य संख्या २३,३०,००० है।

अब तक १६,६७,००० एकड़ भूमि का सुधार किया जा चुका है और २८ लाख ५० हजार एकड़ जमीन के लिए सिंचाई की व्यवस्था की गई है। विकास खण्डों में सिंचाई की छोटी-छोटी योजनाएँ पूरी करने में काफी जन-सहयोग प्राप्त हुआ।

बीस हजार नए स्कूल खोले जा चुके हैं। ५३,००० प्रौढ़-शिक्षा-केन्द्र खोले गए हैं और १२,८४,००० व्यक्ति साक्षर बनाए जा चुके हैं।

गाँवों में पीने का साफ पानी उपलब्ध करने और गन्दगी दूर करने के जो प्रयत्न किए गए, वे भी विकास की दृष्टि से विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। अब तक ५८,००० नए कुएँ बनाए गए हैं और ८२,००० कुओं की मरम्मत की गई है। गन्दे पानी की निकासी के लिए ८७,००,००० गज नालियाँ बनाई गई हैं। औरतों और बच्चों के स्वास्थ्य की देखभाल के लिए ९४७ जच्चा-बच्चा केन्द्र खोले गए हैं।

सड़कें

ज्ञात हुआ है कि ३० सितम्बर, १९५६ तक विकास क्षेत्रों

में ७,१३५ मील पक्की सड़कें बनाई जा चुकी थीं। ४२,००० मील कच्ची सड़कें बनीं और ३०,००० मील सड़कों की मरम्मत की गई।

इन सामुदायिक योजनाओं का एक लाभ यह भी हुआ है कि इनके द्वारा विभिन्न वर्गों के सहस्रों लोगों को रोजी मिली है। योजना अधिकारियों, खण्ड विकास अधिकारियों, ग्राम सेवकों, समाज-शिक्षा आयोजकों, अध्यापकों तथा कृषि, पशु-पालन, स्वास्थ्य, इंजीनियरिंग आदि कार्यों के विशेषज्ञों के रूप में लोगों को काम पर लगाया गया है। द्वितीय योजना की अवधि में, जब राष्ट्रीय विस्तार सेवा के अन्तर्गत यह विकास कार्यक्रम सम्पूर्ण देश में फैल जाएगा, उस समय इसमें लगभग ३,५०,००० प्रशिक्षित कर्मचारी कार्य कर रहे होंगे। योजनाओं के परिणाम-स्वरूप गाँवों में छोटे तथा घरेलू उद्योगों आदि का विकास होने से भी लाखों व्यक्तियों को काम मिलेगा और उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार होगा। ३० सितम्बर, १९५६ तक विकास खण्डों में २,०४० निर्माण और प्रशिक्षण केन्द्र खोले गए और ७५,००० व्यक्तियों ने उनमें काम सीखा। १,४६,००० व्यक्तियों को पूरे समय का और ५,१८,००व्यक्तियों को थोड़े समय का काम मिला।

दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक सारे देश में राष्ट्रीय विस्तार सेवा के अन्तर्गत विकास कार्य चल रहा होगा। उनमें से लगभग ४० प्रतिशत खण्डों को भरपूर विकास कार्य के लिए सामुदायिक विकास खण्डों में बदल दिया जाएगा।

स्पष्ट है कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा हाल में स्वतन्त्र हुए देश के छोटे से पौधे की जड़ को खींच कर उसे पुष्पित और पल्लवित करने के सक्रिय प्रयत्न है। इनका उद्देश्य जन-जन में स्वतन्त्रता का नव-सन्देश पहुँचाना और सामुदायिक विकास के लिए तन, मन, धन से जुट जाने की प्रेरणा देना है।

★

बापू से मेरी पहली भेंट

भदन्त आनन्द कौसल्यायन

मेरी मान्यता है कि बड़े आदमियों का बड़प्पन उनकी बड़ी-बड़ी बातों में नहीं छिपा रहता, वह रहता है उनकी छोटी-छोटी बातों में।

बापू से पहली मुलाकात के समय ही जो अनुभूति हुई, उसका लेखा-जोखा कुछ इस प्रकार है—

उनकी व्यस्तता का ख्याल कर उनकी कुटिया के भीतर पैर रखने में हिचकिचा रहा था कि आवाज़ सुनाई दी—

"आइए, आइए!" *मैं भीतर चला गया।*

"अब आप यहां रहने के लिए आए हैं, एक महीना, दो महीने, चार महीने, जितना रह सकें।"

"हाँ बापू, जितने दिन वर्धा रहूँगा, यहीं रहने की कोशिश करूँगा।"

"अच्छा, तो भोजन की घण्टी बज गई है। पहले जा कर भोजन कर लीजिए।"

"भोजन तो मैं नहीं करूँगा, बापू! थोड़ा दूध पी लूँगा।"

श्रीमन्नारायण जी को इशारा हो गया और मुझे उनके साथ वैसे ही जाना पड़ा जैसे किसी कैदी को सिपाही के साथ। यह थी प्रेम की कैद!

प्रथम दर्शन का ही एक दूसरा चित्र मानस-पटल पर अंकित है—

मैंने मश्रुवाला जी से पूछा—

"बापू के दर्शन कब और कहाँ हो सकेंगे?"

मश्रुवाला जी ने उत्तर दिया—"अभी छः बजने वाले हैं। बापू ठीक छः बजे सैर को निकलते हैं।"

मैं घड़ी ले कर बैठ गया। देखता क्या हूँ कि इधर मेरी घड़ी की दोनों सुइयों ने एक सीधी लकीर बनाई और उधर लड़कियों के कन्धों पर हाथ रखे हुए बापू सड़क की ओर बढ़ते हुए दिखाई दिए।

उस समय मुझे ऐसा लग रहा था कि एक सूर्य अस्त हो रहा है और दूसरा उदय हो रहा है।

आदमी वर्षों से नहीं जीता। बापू ७९ वर्ष जी कर भी सैकड़ों वर्ष जी गए हैं। क्या आज भी वे अदृश्य लोक के अमर प्राणी नहीं हैं?

(आकाशवाणी, बम्बई से प्रसारित एक वार्ता से)

कुर्सी का शौक

सावित्रीदेवी वर्मा

हरखू किसान के लड़के रामचन्द्र ने इस साल दसवीं पास की है। गाँव में वह पहला लड़का था जिसने दसवीं पास की। माँ-बाप को पूरा विश्वास था कि दसवीं पास करके हमारा रामू किसी दफ्तर में कुर्सी सम्हाल लेगा। इसी भरोसे उन्होंने रामू को खेती-बाड़ी का काम भी नहीं सिखाया।

नतीजा निकले अभी चार-पाँच दिन ही हुए थे कि गाँव में भारत सेवक समाज के कर्मचारी दौरा करने आए। पंचायतघर में ग्राम कार्यकर्त्ता श्री दलसुखलाल जी को घेर कर कई लोग वहाँ बैठे हुए थे कि मौका देख कर हरखू भी रामचन्द्र को ले कर वहाँ पहुँच गया और 'जयराम जी की' कर के बोला—"महाराज, यह आपका रामचन्द्र भगवान की दया से मैट्रिक पास हो गया है। अब मेहरबानी कर के इसको कहीं नौकरी पर चटपट लगवा दो।"

दलसुखलाल—"भाई हरखू, तुम लोग तो धरती-पुत्र हो, तुम्हारा अपना स्वतन्त्र धन्धा है। नौकरी की चाहना तुम ने अपने बेटे के लिए भला क्यों की?"

"बात यह है कि अब पढ़-लिख कर इससे किसानी का काम तो हो नहीं सकेगा। आप ही जरा सोचें कि जब इतना पढ़ा-लिखा है, तो क्या हम लोगों की तरह मिट्टी और ढोर-डंगर का काम सम्हालेगा? यह काम तो हम जैसे अनपढ़ों को ही शोभा देता है।"

"यह आप लोगों का गलत ख्याल है कि खेती-बाड़ी का काम केवल अनपढ़ लोगों का ही है। सच पूछा जाए तो इसके लिए परिश्रम और बुद्धि दोनों चाहिएँ। देखिए जापान, चीन, रूस, तथा यूरोप के अन्य देशों में, जहाँ की भूमि हिन्दुस्तान की तरह सपाट नहीं है, वहाँ के किसानों ने धरती को सीढ़ियों की तरह काट-काट कर खेत बना लिए हैं। खेती के नए तरीके अपना कर उन छोटे-छोटे खेतों से ही अन्न का उत्पादन बढ़ा लिया है। जिस गृहस्थ के पास ज़मीन का छोटा-सा भी टुकड़ा होता है, उससे वह अपने खाने-पीने भर के लिए पैदा कर लेता है। यह सब बुद्धि के बल पर ही तो।"

हरखू ने बात बदल कर कहा—"पर, मेरी खेती का काम ही कौन इतना बड़ा है जो रामू को भी उसी में लगा लूँ? लड़का शहर में नौकरी करेगा तो चार पैसे घर ही भेजेगा। जब इतने लोग नौकरी करते हैं, तो फिर पढ़-लिख कर गाँव के लड़के ही नौकरी करने में हेठी क्यों समझें?"

इस पर दलसुखलाल बोले—"भाई, मेरी बात का मतलब तुम नहीं समझे। मेरा यह अभिप्राय कभी नहीं है कि नौकरियाँ केवल शहरवालों के लिए ही सुरक्षित रखी जाएँ। किसी सयाने ने ठीक ही कहा कि 'उत्तम खेती, मध्यम बान, अधम चाकरी, भीख निदान।' खेती-बाड़ी सबसे उत्तम धन्धा है, दूसरा नम्बर आता है व्यापार का, चाकरी तो अधम मानी गई है। पर इधर देखने में यह आता है कि गाँव में जो भी नौजवान पढ़-लिख कर होशियार होता है, वह शहर में नौकरी पाने की ही कोशिश करता है। वह यह नहीं समझ पाता कि मैट्रिक पास को यदि पचास रुपए की नौकरी मिल भी गई, तो अपने घर से दूर रह कर पचास रुपए में उसके खाने-पीने को भी पूरा नहीं पड़ेगा। और फिर आप यह भी बताएँ कि यदि पढ़-लिख कर सभी गाँव छोड़ देंगे, तो फिर गाँव में हमेशा की तरह अनपढ़ों का ही जमघट रह जाएगा। ज़रूरत तो इस बात की है कि पढ़-लिख कर गाँववाले अपने गाँव मे ही रहें, वहाँ की दशा सुधारें, गाँव की उन्नति करें गाँव को ऐसा बना दें कि वह आत्मनिर्भर बन जाए।"

रामचन्द्र बोला—"भला गाँव में कौन-सी नौकरियाँ धरी हैं? पहले रोजी की समस्या हल होनी चाहिए, तब सेवा का काम भी सूझेगा।"

"हां भाई, ठीक तो है कि पहले घर में दिया बाल कर ही फिर मन्दिर में दिया बालने में अक्लमन्दी समझी गई है। देख लो, तुम्हारे गाँव में आटे की चक्की नहीं है, इससे गाँववालों को बड़ी तकलीफ़ होती है, ५०० की आबादी है पर एक भी कोल्हू नहीं लगा, लुहार की एक भी दूकान नहीं, अपनी गाड़ियों की मरम्मत आदि के लिए आपको पास की तहसील जाना पड़ता है। ऐसे काम आप लोग करें, तो जीविका का प्रश्न भी हल हो जाए और गाँववालों को भी सहूलियत रहे।"

तिवारी पटेल बोला—"पर इसके लिए तो पैसा चाहिए, तभी काम शुरू हो सकता है। हरखू के पास इतना पैसा कहाँ कि चक्की लगा ले?"

हरखू ने पगड़ी ठीक करते हुए कहा—"पटेल ने ठीक बात कही। हमारी हालत तो ऐसी है कि जिस साल खेती-बाड़ी हो गई, उस साल खाने पीने को निकल आया; नहीं तो बैठे बिसूरते रहते हैं।"

दलसुखलाल ने उत्तर दिया—"भाई, तुम लोग यदि केवल खेती के ही भरोसे रहोगे, तो गुज़र होनी कठिन है। साल में केवल कटाई और बुवाई के दिनों में परिश्रम करके बाकी साल तो अधिकांश समय तुम लोग गप-शप में ही गुज़ार देते हो। यदि खेती के अलावा अवकाश के समय कोई उपयोगी धन्धा

अपना लो तो बहुत लाभ हो ! रामचन्द्र भाई, तुम तो पढ़े-लिखे हो, सहकारी ढंग से काम करने की योजना बनाओ। एक काम मैं ही बताता हूँ, उसमें कुछ सहयोग भी दूँगा।"

सब लोग बात सुनने के लिए उत्सुक हो गए। दलसुखलाल ने गंगा अहीर से पूछा-"चौधरी जी, यह बताओ कि तुम्हारे गाँव में कितने घर अहीरों के हैं और औसतन कितना दूध रोज़ हो जाता है ?"

चौधरी बोला—"यही समझ लो कि अहीरों के पचास घर हैं, औसतन यही कोई ७-८ मन दूध तो रोज़ हो ही जाता है।"

"क्या करते हो उस दूध का ?"

"जिनके पास साइकिल है, वे तो अपना दूध बाहर ले जाते हैं, बाकी के घर में दूध जमा कर घी निकाल लेते हैं और हाट के रोज़ बेच आते हैं। पर दाम पूरा नहीं मिलता।"

"मतलब यह कि इससे कुछ विशेष लाभ नहीं होता। यदि आप कुछ लोग मिल कर दूध की एक डेरी चला लो, तो रोज़ का दूध शहर पहुँचाने का ठेका तो तहसील के सरदारसिंह को दिया जा सकता है। उसके पास लारी है। रामचन्द्र सब के दूध का हिसाब भी रख लेगा और लारी में साथ जा कर शहर की सहकारी डेरी में दूध पहुँचा दिया करेगा। आमदनी में से रुपए पीछे एक आना रामचन्द्र को दे देना।"

सब को यह बात बहुत पसन्द आई। सबके सहयोग से उनकी यह योजना खूब सफल भी रही। अब तो रामचन्द्र से सब बहुत खुश थे। लाभ होता देख कर आस-पास के गाँवों के लोग भी इस योजना में शरीक हो गए। लोगों ने आमदनी का एक हिस्सा अलग रख कर चार बरस में ही एक लारी खरीद ली। गंगू अहीर का लड़का भागीरथ भी मिडल पास करके इसी काम में लग गया और उसने सरदारसिंह से लारी चलानी सीख ली। अब जब डेरी फार्म की खुद लारी हो गई, तो भागीरथ को ड्राइवर का काम सौंप दिया गया। अब तो उनके गाँव की डेरी के दूध की खपत और भी बढ़ गई। आमदनी अच्छी होने पर पशुओं की नस्ल भी सुधारी गई। इस साल पशु प्रदर्शनी में इनके गाँव के पशु अव्वल रहे।

रामचन्द्र के छोटे भाई ने अब एक पनचक्की लगा ली है। दो-तीन दोस्तों ने मिलकर एक छोटा-सा कारखाना खोल लिया है, जहाँ पर दो-तीन लुहार और बढ़ई काम करते हैं। गाँव के लिए रहट, गाड़ियों के पहिए, किवाड़ों की जोड़ियाँ, खेती के औज़ार आदि सब कुछ यहीं तैयार होते हैं। अब इनका यह काम इतना चल निकला है कि आस-पास के गाँवों के मँहगू, रतना, मुबारक, निहाल सिंह आदि अनेक लड़के पढ़-लिख कर इसी कारखाने में काम करने लगे हैं। अब वे इस बात को भली प्रकार समझ गए हैं कि पढ़-लिख कर नौकरी की अपेक्षा अपने गाँव में ही कोई ऐसा उपयोगी धन्धा शुरू करना चाहिए कि चार पैसे की आमदनी भी हो और गाँव का व्यवसाय भी उन्नत हो सके।

★

सामुदायिक-विकास— [पृष्ठ ९ का शेषांश]

गया है, गान्धी जयन्ती के दिन २ अक्तूबर, १९५२ को शुरू हुआ था। इस कार्यक्रम का यह उद्देश्य सरकारी तौर पर इन शब्दों में घोषित किया गया—

सामुदायिक-विकास योजनाओं का उद्देश्य योजना के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्र के सभी निवासियों के, चाहे वे स्त्री, पुरुष या बच्चे हों, 'जीने के अधिकार' की स्थापना का आदर्श प्रस्तुत करना है। साथ ही जीवन की प्राथमिक आवश्यकता—पर्याप्त खाद्य सामग्री की व्यवस्था के लिए योजनाओं के आरम्भ-काल में यथेष्ट बल दिया जाएगा।

कार्यक्रम को शुरू हुए चार साल से ऊपर हो गए हैं। इस बीच उसका क्षेत्र कहीं अधिक व्यापक हो गया है, परन्तु अब भी खेती की ओर अधिक ध्यान दिया जा रहा है।

मनुष्य समाज में रहता है और समाज के द्वारा ही वह जीवन का उच्चतम लक्ष्य प्राप्त करता है। अतएव सामुदायिक-विकास का उद्देश्य नैतिक और मानसिक दृष्टि से मनुष्य (ग्रामीण) के व्यक्तित्व को विकसित करना, उसे सक्रिय सामाजिक प्राणी बनाना है। भीषण गरीबी, पिछड़ापन और अन्य बुराइयों को, जो हमारे गाँवों में घर कर गई हैं, ग्रामवासियों के निजी और सामूहिक प्रयत्नों से ही दूर किया जा सकता है। हमारे प्रधान मन्त्री ने कहा है—

मानव ही हमारा साध्य और साधन है, मानव ने ही इतिहास रचा है और मानव ने ही मानवता का नारा बुलन्द किया है। भारत में यदि लोगों को सही किस्म की शिक्षा-दीक्षा दी जाए, तो सारी समस्याएँ आसान हो जाएँगी। पिछले कुछ वर्षों में हमारा अनुभव रहा है कि आप यह कार्य कर सकते हैं और राह में आनेवाली दिक्कतों को पार कर सकते हैं।

विस्तार कार्य में महिलाओं का योग

झरना राय

कुमारी झरना राय एम० ए० पश्चिम बंगाल में बर्दवान ज़िले के घरेलू अर्थशास्त्र विस्तार प्रशिक्षण केन्द्र, बरसुली में सहायक शिक्षिका हैं। हाल में ही वह घरेलू अर्थशास्त्र की उच्च शिक्षा प्राप्त करने अमेरिका गई थीं। नई दिल्ली में होने वाली किसान गोष्ठी में पश्चिम बंगाल की एक प्रतिनिधि के रूप में उन्होंने भी भाग लिया था।

गाड़ी तब तक नहीं चल सकती, जब तक उसके दोनों पहिए ठीक न हों। इसी तरह एक विस्तार-कार्यकर्त्ता तब तक अपने काम में सफल नहीं हो सकता जब तक उसके क्षेत्र के स्त्री और पुरुष, दोनों ही उसे काम में सहयोग न दें। मैं पिछले साल अमेरिका गई थी। वहाँ के हालत देख कर मैं इसी निष्कर्ष पर पहुँची कि अमेरिका की समृद्धि का एक बड़ा कारण यह है कि वहाँ की ललनाओं ने भी राष्ट्रीय महत्व के कार्यों में सक्रिय सहयोग दिया। जब तक स्त्रियाँ अपनी शक्ति भर काम नहीं करेंगी, तब तक बड़ी-बड़ी विकास-योजनाओं के पूरे होने की कोई आशा नहीं। विकास-कार्यों में स्त्रियों का भाग लेना कोई नई बात नहीं है। प्राचीन काल में भी स्त्रियाँ विकास-कार्यों में, और विशेष कर शिक्षा सम्बन्धी कार्यों में पुरुषों के बराबर ही भाग लेती थीं। गार्गी, मैत्रेयी, लीलावती, भारती आदि ने शिक्षा क्षेत्र में काफ़ी योग दिया। मैगस्थनीज़ के यात्रा वृत्तान्तों में हम पढ़ते हैं कि राज्यश्री राजकाज चलाने में अपने भाई हर्षवर्धन की सहायता किया करती थी। रज़िया सुल्ताना का शासन काल काफ़ी सफल रहा। रानी भवानी और रानी रासमणि ने जिस कुशलता से जमींदारी का प्रबन्ध चलाया, वह सर्वविदित है।

न केवल रानियों-महारानियों ने ही, बल्कि साधारण स्त्रियों ने भी देश के विकास में महत्वपूर्ण भाग अदा किया। आज भी गाँवों में औरतें, मर्दों के साथ मिल कर खेती का काम करती हैं।

भारत एक कृषि प्रधान देश है। अधिकतर जनता गाँवों में रहती है। उनकी जीविका का मुख्य साधन खेती ही है। धरती पर चूँकि बहुत अधिक लोग निर्भर रहते हैं, इसलिए खेती से प्रति व्यक्ति आय भी बहुत कम है। विस्तार-कार्य को इतनी द्रुत गति से शुरू करने का यही कारण है यदि यह कार्यक्रम ठीक तरह पूरा किया जाए तो इससे उपज तो बढ़ेगी ही और उसी के साथ-साथ किसानों की प्रति व्यक्ति आय भी बढ़ जाएगी।

इसीलिए कृषि विस्तार कार्यक्रम हमारी दूसरी पंचवर्षीय योजना का सबसे महत्वपूर्ण अंग है।

पर हमारा उद्देश्य केवल इतना ही नहीं है कि पैदावार बढ़ा कर किसानों की आमदनी बढ़ाई जाए। यह तो हमारे उद्देश्य की पूर्ति की ओर एक कदम मात्र है। हमारा उद्देश्य तो जनता का रहन-सहन ऊँचा उठाना है। और इसके लिए हमें कई कदम उठाने पड़ेंगे। उदाहरण के लिए ग्रामीण स्त्रियों को यह सिखाना कि समय, शक्ति, धन और वस्त्र का सदुपयोग कैसे किया जाए तथा बच्चों की देखभाल किस तरह की जाए। साथ ही उन्हें भोजन और उसकी पौष्टिकता तथा व्यक्तिगत और सार्वजनिक स्वास्थ्य के बारे में बुनियादी बातें बताना भी ज़रूरी है।

पर यह सब कुछ तभी हो सकता है जब उन्हें घर का सुधार करने की उचित शिक्षा दी जाए। इसलिए कुछ कार्यकर्त्ताओं को घर के सुधार के बारे में प्रशिक्षण देने की आवश्यकता अनुभव की गई।

फलतः कृषि विस्तार कार्यक्रम के साथ-साथ गृह विज्ञान विस्तार कार्यक्रम भी शुरु किया गया और देश भर में गृह विज्ञान विस्तार प्रशिक्षण केन्द्र खोले गए। यह केन्द्र कृषि मन्त्रालय चला रहा है। आजकल ऐसे २७ विस्तार प्रशिक्षण केन्द्र हैं। इनमें लड़कियों को गृह विज्ञान का अर्थात् समय और शक्ति के सदुपयोग, गृह-प्रबन्ध में किफ़ायतशारी, कपड़े के समुचित उपयोग, शिशु और माँ की उचित देखभाल, खाद्य और पौष्टिकता तथा व्यक्तिगत और जन-स्वास्थ्य के बारे में प्रशिक्षण दिया जाता है।

इस प्रकार के प्रशिक्षण का उद्देश्य यह है कि महिला कार्यकर्त्ताओं का ऐसा दल तैयार किया जाए जो घरेलू अर्थशास्त्र के विस्तार कार्यक्रम को ठेठ ग्रामीण महिलाओं तक पहुँचा दे।

प्रशिक्षण समाप्त करने के बाद समस्या यह खड़ी होती है कि उन्हें जो कुछ प्रशिक्षण दिया गया है, उसे अमली जामा किस तरह पहनाया जाए। और यह समस्या वास्तव में गम्भीर है। जो विस्तार कार्यकर्त्ता विशेष रूप से महिलाओं में काम करते है, उन्हें कोई भी नया कार्यक्रम चालू करते समय काफ़ी सावधानी से ही आगे बढ़ना पड़ता है। किसी नए कार्यक्रम को शुरु करते समय ग्राम सेवक विस्तार कार्यकर्त्ता ये तरीके अपनाते हैं—

(क) **व्यक्तिगत सम्पर्क**
(ख) **जन सम्पर्क**
(ग) **उपायों का प्रदर्शन**
(घ) **परिणामों का प्रदर्शन**
(ङ) **फ्लैशकार्डों का उपयोग,**
(च) **फ्लैनलग्राफ़ों का उपयोग,**
(छ) **फिल्मों का प्रदर्शन ।**

विस्तार कार्य के पहले सोपान में ग्राम सेविका के लिए व्यक्तिगत सम्पर्क बहुत सहायक सिद्ध होता है। असली उद्देश्य तो यह होता है कि महिलाओं के क्लब बना कर उनकी सहायता से विस्तार कार्यक्रम पूरे किए जाएँ। इसीलिए जिस इलाके में मैं काम कर रही हूँ, उस इलाके के महिला क्लबों को बहूद्देशीय बनाया जा रहा है। अब से पहले वे बहुत कुछ दस्तकारी प्रशिक्षण केन्द्रों की तरह ही थे, जिनमें थोड़ी-बहुत अन्य गतिविधियाँ भी चलती थीं।

पर ऐसे क्लब बनाना कोई सरल कार्य नहीं है। हमारे मार्ग में कई रुकावटें हैं। सबसे पहली रुकावट है गाँव के पुरुषों का विरोधी रुख। वे महिलाओं की संस्थाओं को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। इसका कारण यह है कि हमारे गाँवों में लोग परम्परा से ही स्त्रियों को उचित आज़ादी देने के विरुद्ध रहे हैं। इसलिए गाँवों में काम करने वाले ग्राम सेवकों और ग्राम सेविकाओं में आपस में तालमेल होना चाहिए।

दूसरी कठिनाई यह है कि स्त्रियों के पास समय का अभाव होता है। वे सदा ही घर और खेत के काम के बोझ से इस बुरी तरह दबी रहती हैं कि उनके पास महिला क्लबों या अन्य संगठनों में जाने के लिए समय ही नहीं बचता। ऐसी दशा में यह ज़रूरी है कि देहाती औरतों को यह बताया जाए कि घरेलू अर्थशास्त्र विस्तार कार्यक्रम द्वारा किसी आर्थिक समस्या का हल ढूँढ़ा जाएगा। यदि देहाती औरतों के मन में यह विश्वास बैठ जाए कि क्लब में सम्मिलित होने से तुरन्त और पर्याप्त लाभ होने की सम्भावना है, तभी उन्हें क्लब में आने के लिए आकर्षण होगा।

इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उस इलाके की आवश्यकताओं को देखते हुए और उपलब्ध सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए समुचित आर्थिक कार्यक्रम शुरू किए जाने चाहिएँ।

कई बार यह देखा गया है कि गाँवों के रीति-रिवाजों और रूढ़ियों के कारण नए-नए कार्यक्रम शुरू करने में दिक्कत होती है। इसलिए समाज-शिक्षा परमावश्यक है। समाज-शिक्षा संगठक और ग्राम सेविकाएँ इस दिशा में काफ़ी कुछ कर सकती हैं।

तीसरी बड़ी कठिनाई है महिलाओं में से ही नेताओं को ढूँढ़ना। पिछले सैंकड़ों-हज़ारों वर्षों से स्त्रियों के प्रति जो दुर्व्यवहार होता रहा है, उसके कारण उनमें आत्म विश्वास की बहुत कमी है। इस लिए ग्राम सेविकाओं के सामने एक बहुत बड़ा कार्य है उनमें खोया हुआ आत्मविश्वास पुनः पैदा करना।

ग्राम सेविका को चाहिए कि यदि किसी नए तरीके को सीखने या किसी नई योजना को पूरा करने में स्त्रियों को असफलता भी मिले, तो भी वह उन्हें प्रोत्साहन देती रहे। इस प्रकार ग्राम सेविका उनकी बहुत बड़ी सेवा कर सकती है।

ग्राम सेविका के लिए चौथा और सबसे कठिन कार्य यह होता है कि उसे हमारी जात-पाँत की प्रणाली के मूल पर ही कुठाराघात करना पड़ता है। देहातों में कोई भी कार्य संगठित रूप से करने में सब से बड़ी बाधा है जात-पाँत का भेद। हाँ, यह ठीक है कि शुरू-शुरू में जात-पाँत के आधार पर ही संगठित ढंग से कार्य शुरू किए जा सकते हैं।

पर हमारा मूल उद्देश्य यही है कि जात-पाँत को जड़ से मिटा दिया जाए।

गाँवों में काम करते हुए यह कठिनाइयाँ मुख्य रूप से मेरे सामने आई। कभी-कभी इन कठिनाइयों से हम धैर्य खो बैठते हैं। पर हमें हिम्मत नहीं हारनी चाहिए और प्रयत्न करते रहना चाहिए। यदि हमारा लक्ष्य उच्च है और अपने ऊपर विश्वास है, तभी हम नवभारत का निर्माण करने में सफल होंगे। इस नए भारत में हमारा महिला समाज उत्साह से परिपूर्ण होगा, नए विचारों को अपनाने को तत्पर होगा और नए विचारों तथा हमारी संस्कृति में सामंजस्य बिठा सकेगा। तभी हमारा ध्वज नील गगन में शान से फहराता रहेगा।

★

खलानां कण्टकानां च द्विविधैव प्रतिक्रिया ।
उपाहानान्मुख भंगो वा दूरतो वा विसर्जनम् ॥

"नीच आदमी और कांटे से बरतने के दो ही उपाय हैं : या तो जूते से इनका मुँह कुचला जाए, या फिर इन दोनों से दूर ही रहा जाए।"

प्रगति के पथ पर

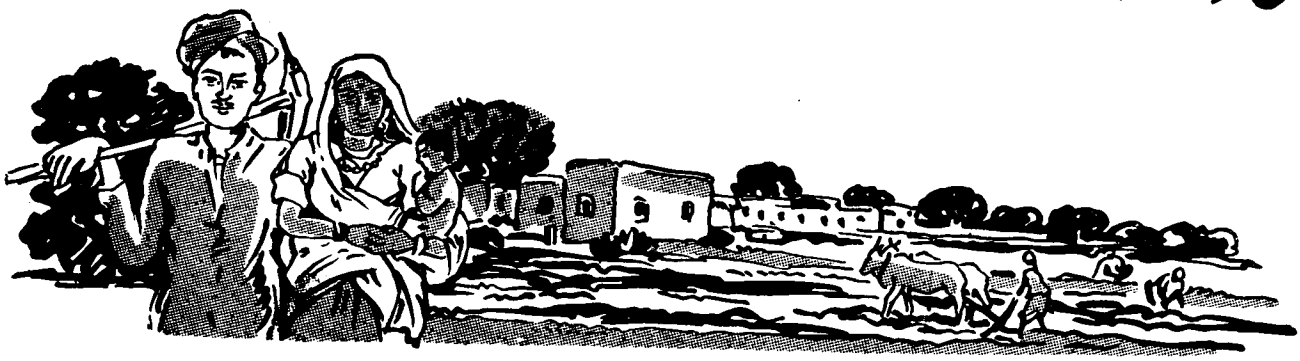

सामुदायिक विकास योजनाओं के लिए प्रशिक्षण

सामुदायिक विकास मन्त्रालय ने एक ऐसे प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया है जिसमें एक स्थान से दूसरे स्थान पर जा कर, सामुदायिक विकास-योजनाओं के सम्बन्ध में शिक्षा देने के लिए १७ दलों को प्रशिक्षण दिया जाएगा। प्रशिक्षणार्थियों के इन दलों में भारत के सभी भागों के लोग हैं।

इस शिविर में जिन विषयों का प्रशिक्षण दिया जाएगा, उनमें मुख्य ये हैं : पंचवर्षीय योजनाएँ, सामुदायिक विकास-योजनाओं का इतिहास और मूल सिद्धान्त, समाज शिक्षा, नागरिकता, प्रौढ़-साक्षरता, जनसंख्या वृद्धि की समस्याएँ, पंचायतें, पशुपालन, मातृत्व और शिशु कल्याण, स्काउटिंग तथा जन-स्वास्थ्य आदि।

हर दल में दो-दो व्यक्ति हैं, जिन्हें चौदह राज्य सरकारों ने चुन कर भेजा है। बम्बई, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश ने दो-दो दल भेजे हैं, जिनमें स्त्रियों का भी एक दल है।

२४ अप्रैल को प्रशिक्षण समाप्त होने पर प्रशिक्षणार्थियों का हरेक दल अपने-अपने राज्य में चला जाएगा और वहाँ खण्डों के मुख्यालयों में चार-चार सप्ताह के कम से कम आठ शिविर लगाएगा, जिनमें ५०-५० स्कूल अध्यापक प्रशिक्षण प्राप्त करेंगे। ये दल एक शिविर से दूसरे शिविर में घूमते रहेंगे।

ये शिविर चुने हुए सामुदायिक विकास खण्डों में लगाए जाएँगे और इनके संचालन में उस क्षेत्र के खण्ड कर्मचारियों और विशेषज्ञों की सहायता प्राप्त की जाएगी। बाद में खण्ड कर्मचारी इन १७ दलों के लोगों की सहायता के बिना ही शिक्षकों के लिए पुनरभ्यास पाठ्यक्रम का आयोजन करेंगे।

चार साल बाद जब यह योजना पूरी होगी, तब तक ३४,००० ग्राम अध्यापक विविध विकास कार्यक्रमों की जानकारी प्राप्त कर चुकेंगे। बाद में ये अध्यापक इस जानकारी को देश में फैलाएँगे।

इस तरह के प्रशिक्षण के बाद गाँव के स्कूल सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के केन्द्र बन जाएँगे और इस प्रकार ग्राम सेवकों को समाज शिक्षा के लिए बहुत बड़ा क्षेत्र मिल जाएगा।

अम्बर चर्खे के बारे में अनुसन्धान

भारत सरकार ने अम्बर चर्खे के बारे में अनुसन्धान के लिए ६२,६२० रुपए का अनुदान मंजूर किया है, जिसमें से अनावर्तक व्यय के लिए २८,००० रुपए और आवर्तक व्यय के लिए ३४,६२० रुपए हैं। यह अनुसन्धान अहमदाबाद की टैक्स-टाइल इण्डस्ट्रीज रिसर्च असोसिएशन कराएगी। अनुदान इस शर्त्त पर दिया गया है कि इस अनुसन्धान के जो भी परिणाम निकलेंगे, उन पर अ० भा० खादी और ग्रामोद्योग मण्डल का अधिकार रहेगा।

भारत सरकार ने अ० भा० खादी और ग्रामोद्योग मण्डल को ६६ लाख ८० हजार रुपए का ऋण भी मंजूर किया है। यह रकम चालू वित्तीय वर्ष में अम्बर चर्खे की योजनाओं को क्रियान्वित करने के लिए ऋण देने में खर्च की जाएगी।

मण्डल को खादी का उत्पादन बढ़ाने के लिए ५ लाख रुपए और दिए गए हैं। इस रकम से १९५६-५७ में खादी के काम आने वाले औज़ार कम दामों पर बाँटे जाएँगे।

कृषि-विस्तार

सामुदायिक विकास कार्यों और राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यों में और काम कराने के लिए कर्मचारियों की बढ़ती हुई आवश्यकता की पूर्ति के हेतु १९५६-५७ में ८ और बेसिक कृषि स्कूल खोले गए, जिससे उनकी कुल संख्या ५५ हो गई। ५ और विस्तार प्रशिक्षण केन्द्र १९५६-५७ में खुले, जिससे उनकी कुल संख्या ४८ हो गई। इन विस्तार प्रशिक्षण केन्द्रों में साथ ही साथ खण्ड निरीक्षण कार्यकर्त्ताओं का भी प्रशिक्षण हो रहा है और इसी प्रकार की प्रशिक्षा के लिए तीन और केन्द्र १९५६-५७ में स्थापित हुए जिससे उनकी कुल संख्या १३ हो गई। गृह विज्ञान के सत्ताइसों केन्द्र, जिनकी पहले ग्राम-सेविका-प्रशिक्षण के लिए परिकल्पना की गई थी, अब काम करने लगे हैं।

फल और सब्जी संरक्षण के सम्बन्ध में गवेषणा

फल और सब्जी संरक्षण के सम्बन्ध में गवेषणा करने के लिए पंजाब, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बम्बई और पश्चिम बंगाल में पाँच प्रादेशिक केन्द्र शीघ्र ही खोले जाएँगे। इन केन्द्रों के खोलने की सिफारिश भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद की फल-सब्जी विकास समिति ने की। समिति ने यह भी कहा कि १९५७-५८ में दो, और १९५८-५९ में तीन प्रादेशिक केन्द्र खोले जाएँ।

ये केन्द्र भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद के औद्योगिक केन्द्रों के सहयोग से काम करेंगे और इन पर मैसूर की केन्द्रीय खाद्य प्राविधिक गवेषणाशाला का नियन्त्रण रहेगा। यह शाला आन्ध्र, केरल और मद्रास राज्यों की ज़रूरतें भी पूरी करेगी।

समिति ने फल और सब्जी के संरक्षण के लिए ठण्डे गोदाम खोलने और मुरब्बों के सम्बन्ध में गवेषणा करने के लिए प्रादेशिक केन्द्र खोलने आदि की योजनाओं पर भी विचार किया। इसके अलावा, दूसरी योजना के अन्तर्गत बागबानी के विकास की योजनाओं पर भी विचार किया गया।

सामुदायिक योजना क्षेत्रों के सूचना-केन्द्र

हाल में, विभिन्न राज्यों के सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा क्षेत्रों के खण्ड कार्यालयों में ५२ सूचना केन्द्र खोले गए हैं। इनको मिला कर सूचना केन्द्रों की कुल संख्या ८४७ हो गई है। इन नए सूचना केन्द्रों में से २६ बिहार में, १० राजस्थान में, ३ हिमाचल प्रदेश में, १ पंजाब में और १२ मैसूर में खोले गए हैं।

ये सूचना केन्द्र राष्ट्रीय और राज्यीय महत्त्व के कार्यों के बारे में अधिकृत सूचना देते हैं। इनमें खण्ड के लोगों को मिल कर बैठने और बातचीत करने का अवसर भी मिलता है

दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में इस तरह के ४,१०० केन्द्र खोलने का विचार है। पहली योजना में खोले गए ७०० सूचना केन्द्रों को मिला कर १९६१ के अन्त तक कुल ४,८०० केन्द्र हो जाएँगे।

अनाज की उपज

गत वर्ष, १९५५-५६ में २५५ लाख टन चावल की उपज हुई जो १९५४-५५ की अपेक्षा १० लाख टन अधिक थी। अनुमान है कि १९५५-५६ में गेहूँ की उपज ८४ लाख टन हुई जो १९५४-५५ की अपेक्षा ४ लाख टन कम है। दूसरे अनाज जैसे ज्वार, बाजरा, मकई, रागी और जौ इत्यादि की उपज १९५५-५६ में बहुत कम रही। अनुमान किया गया है कि इस वर्ष १९५ लाख टन की उपज हुई जो १९५४-५५ की अपेक्षा २९ लाख टन कम रही। १९५५-५६ में सारे अनाजों की उपज ५३४ लाख टन हुई जो १९५४-५५ की अपेक्षा २३ लाख टन कम होते हुए भी प्रथम योजना के लक्ष्य स्तर से ९ लाख टन अधिक थी।

★

योजना

गत २६ जनवरी से भारत सरकार "योजना" नाम से हिन्दी में एक पत्रिका प्रकाशित कर रही है। इसका उद्देश्य गाँवों और शहरों, बच्चों और बूढ़ों, लड़कियों और युवतियों में भारत के नव-निर्माण का सन्देश पहुँचाना और साथ ही जनता की आवाज़ सरकार तक पहुँचाना है। "आपकी राय" स्तम्भ में जनता की आवाज़ गूंज रही है, भले ही वह लाल फीता और नौकरशाही के विरुद्ध जाए।

देखिए किन शब्दों में प्रतिष्ठित हिन्दी पत्रों ने हिन्दी "योजना" का स्वागत किया है :

साप्ताहिक प्रताप--"सरकारी प्रकाशन होते हुए भी 'योजना' जनसेवा में अपना स्थान बना सकेगी, ऐसी आशा की जाती है।"

अमृत पत्रिका--"इस पाक्षिक पत्र को अब से बहुत पहले ही प्रकाशित कर देना चाहिए था।"

उजाला--"प्रकाशन सराहनीय और विषय की आवश्यकता देखते हुए बहुत संवर्धनीय है।"

संसार--"हम इस कल्याणकारी पत्र को उन्नति की कामना करते हैं और चाहते हैं कि शीघ्र ही इसका प्रकाशन साप्ताहिक रूप में हो। इसमें चित्र भी पर्याप्त रहते हैं और छपाई सफाई सुन्दर।"

अमर ज्योति-"पत्र की वर्तमान सामग्री से उसका भविष्य उज्ज्वल दीखता है। वह जिस उद्देश्य व ध्येय को लेकर चला है वह निस्सन्देह प्रशंसनीय है।"

भारतीय श्रमिक--"कलात्मक चित्रों और कार्टूनों से अंक और भी सम्पूर्ण हो गया है। कुल मिलाकर अंक रेखा और संगीत दोनों ही दृष्टि से बहुत ही सम्पूर्ण है। सम्पादक बधाई स्वीकारें।"

यह भारतीय उन्नति का प्रतीक है। साहित्य और आलोचना भी छपती है।

हमारे लेखकों में **वृन्दावनलाल वर्मा, माखनलाल चतुर्वेदी, रांगेय राघव, नागार्जुन, सत्यकेतु विद्यालंकार, खुशवन्तसिंह, मन्मथनाथ गुप्त, सत्यदेव विद्यालंकार** आदि हैं। हर अंक में बीसियों चित्र होते हैं।

आज ही ग्राहक बनिए। एक प्रति के दो आने और वार्षिक मूल्य २॥) रु०। अपने पुस्तक-विक्रेता से माँगें या लिखें :—

प ब्लि के श न्स डि वी ज़ न,

ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली–८

Regtd. No.D. 28

बालोपयोगी रोचक साहित्य

	मूल्य	डाक-व्यय
जातक कथाएँ—भाग-१	०·७५	०·२५
भाग-२	१·००	०·२५
सरल पंचतन्त्र—भाग-३	०·३५	०·१२
भाग-४	०·३५	०·१२
भाग-५	०·३५	०·१२
गौतम बुद्ध	०·०५	०·०६
प्रयाग दर्शन	०·२५	०·१२
भारत की कहानी	०·७५	०·१६
जवाहरलाल नेहरू के भाषण भाग-३, ५, ६,	०·०५ प्रत्येक	०·०६ प्रत्येक
आदर्श विद्यार्थी बापू	०·३५	०·१२
नये सिक्के	०·२५	० १२
सरल पंचवर्षीय योजना	० ५०	०·१२
हमारी द्वितीय पंचवर्षीय योजना	०·३५	०·१२
मनोरंजक कहानियाँ	१·००	०·२५
भारतीय वास्तु-कला के ५००० वर्ष	२ ००	०·३०
भारत के बौद्ध-तीर्थ	२·००	०·३०

दस रुपये या इससे अधिक के आर्डर पर डाक-व्यय नहीं लिया जायगा।
पोस्टल आर्डर द्वारा रुपया प्राप्त होने पर सुविधा रहती है।

सभी प्रमुख पुस्तक-विक्रेताओं से प्राप्य अथवा सीधा लिखें—

बिज़िनेस मैनेजर

पब्लिकेशन्स डिवीज़न

ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली-८

Printed at the Albion Press, Kashmere Gate, Delhi 6, and Published on behalf of Ministry of Community Development by the Publications Division, Delhi—8